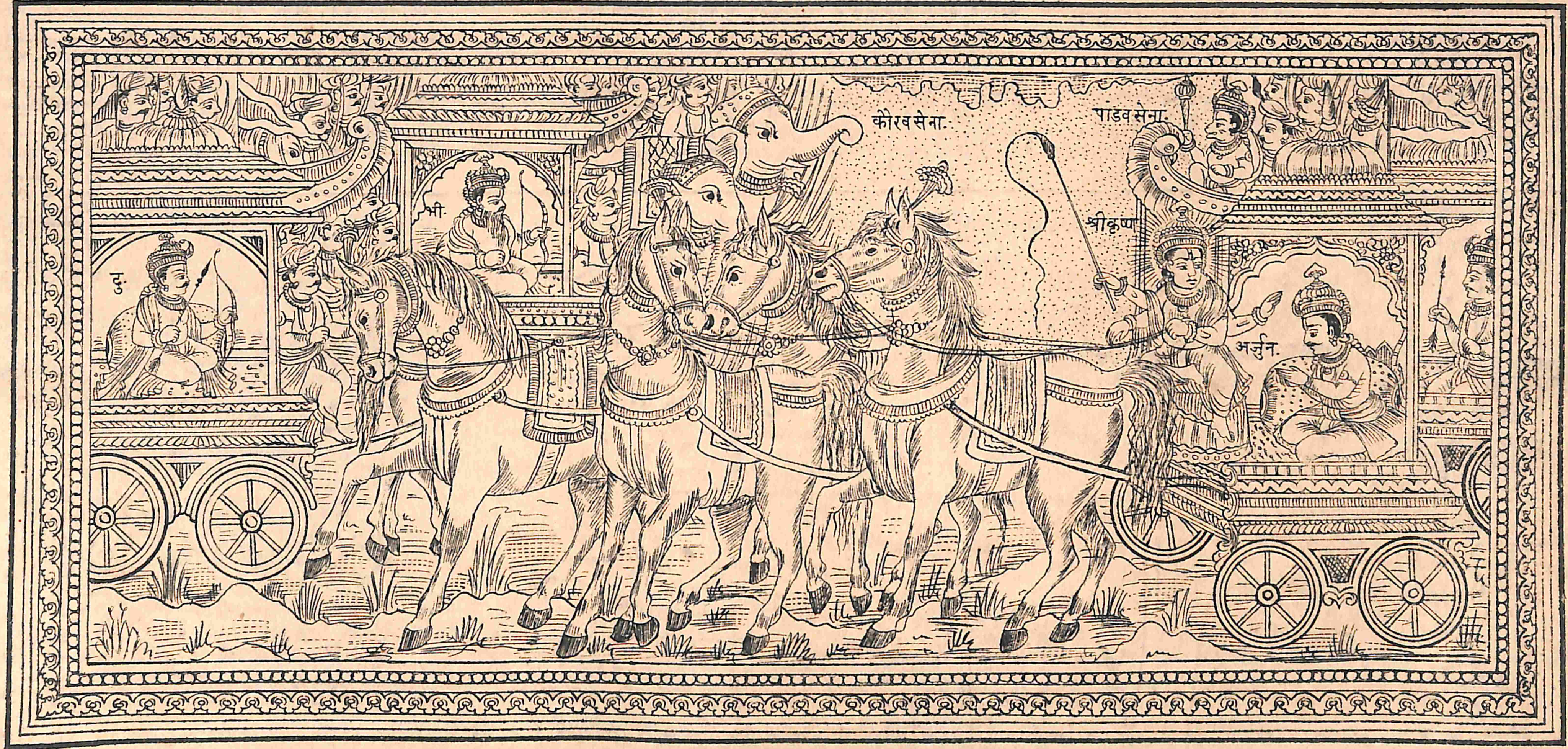
अथ स्वामिचिद्घनानंदगिरिकृतभाषाटीकासहितभगवद्गीताप्रारम्भः


दु.
भी.
कौरवसेना.
पाडवसेना.
श्रीकृष्ण
अर्जुन.

ॐ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीकाशीविश्वेश्वराभ्यां नमः ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ श्रीशंकराचार्येभ्यो नमः ॥ ॥ श्लोकः ॥ शंकरं शंकराचार्यं व्यासं नारायणात्मकं ॥ सरस्वतीं च ब्रह्माणं प्रणमामि पुनःपुनः ॥ १ ॥ प्रकाशितब्रह्मतत्त्वं प्रकृष्टगुणशालिनं ॥ प्रणवस्योपदेष्टारं प्रणमाम्यनिशं गुरुं ॥ २ ॥ श्रीकृष्णचरणद्वंद्वं प्रणिपत्य पुनःपुनः ॥ प्रायः प्रत्यक्षरं कुर्वे गीतागूढार्थदीपिकां ॥ ३ ॥ अर्थ यह । श्रीशंकररूप जो श्रीशंकराचार्य हैं तिनोंकूं तथा नारायणरूप जो व्यासभगवान् हैं तिनोंकूं तथा सरस्वतीदेवीकूं तथा ता सरस्वतीके भर्त्ता ब्रह्माकूं मैं वारंवार नमस्कार करताहूं इति ॥ १ ॥ और जिन श्रीगुरुवोंनैं हमारे हृदयविषे ब्रह्मतत्त्व प्रकाश करा है । तथा जे गुरु विवेकवैराग्यादिक उत्तम गुणोंकरिकै युक्त हैं । तथा जे गुरु हम अधिकारी जनोंके प्रति प्रणवमंत्रका उपदेश करणेहारे हैं । ऐसे श्रीगुरुवोंकूं मैं वारंवार नमस्कार करताहूं इति ॥ २ ॥ और या गीताशास्त्रका कर्त्ता जो श्रीकृष्णभगवान् है ता श्रीकृष्णभगवान्के दोनों चरणकमलोंकूं वारंवार प्रणाम करिकै मैं मुमुक्षु जनोंके प्रति श्रीगीताजीके प्रतिअक्षरोंका अर्थ निश्चय करावणेवासतै श्रीशंकराचार्यकृत भाष्य तथा स्वामीशंकरानंदकृत टीका तथा स्वामीमधुसूदनकृत टीका तथा नीलकंठपंडितकृत टीका या चारोंके अभिप्रायकूं लैके यह गीतागूढार्थदीपिका नामा टीका करताहूं ॥ ३ ॥ तहां इस लोकविषे महान् तप, बल, तेज, शक्तिकरिकै संपन्न तथा सर्व विद्यावोंका समुद्र तथा संपूर्ण सर्वज्ञोंका भूषणरूप तथा साक्षात् नारायणरूप तथा परम कृपालु ऐसे जो श्रीव्यासभगवान् हैं । सो व्यासभगवान् आगे उत्पन्न होणेहारे अधिकारी जनोंके बुद्धिकी मंदताकूं देखिकरिकै तिन अधिकारी जनोंके प्रति धर्मादिक सर्व पुरुषार्थकी प्राप्ति करणेवासतै ता पुरुषार्थकी प्राप्तिके साधनोंकूं कथन करणेहारे वेदराशिका ऋग्, यजुष्, साम और अथर्वण या भेदकरिकै चारि प्रकारका विभाग करता भया । तथा तिन ऋगादिक चारि वेदोंविषे स्थित जो ऐतरेयादिक अनेक शाखा हैं । तिन शाखावोंविषे एक एक शाखाकूं अपणे पैल वैशंपायनादिक शिष्यप्रशिष्यादिद्वारा वधावता भया । इस प्रकार तिन ऋगादिक वेदोंके प्रवृत्त हुएभी तिन वेदोंका अर्थ परम सूक्ष्म है तथा अत्यंत गूढ है तथा अत्यंत दुर्विज्ञेय है । यातैं ता वेदअर्थके जानणेविषे जिन अधिकारी पुरुषोंकी बुद्धि समर्थ नहीं है । ऐसे अधिकारी पुरुषोंऊपरि अनुग्रह करिकै सो श्रीव्यासभगवान् तिन अधिकारी पुरुषोंकेप्रति धर्मादिक सर्व पुरुषार्थोंकी प्राप्ति करणेवासतै तिन धर्मादिक सर्व पुरुषार्थोंके साधनोंकूं कथन करणेहारी तथा शतसहस्र १००००० श्लोकोंकरिकै युक्त एक भारत नामा संहिताकूं रचता भया । और जैसे सर्व नक्षत्रमालाके मध्यविषे चंद्रमंडल स्थित होवैहै । तैसे ता भारत नामा संहिताके मध्यविषे सो श्रीव्यासभगवान् केवल मुमुक्षु जनोंके प्रति कार्यप्रपंचसहित अनादि अविद्याकी निवृत्तिद्वारा विदेहकैवल्यरूप फलकी प्राप्तिवासतै जीवब्रह्मके अभेदकूं प्रतिपादन करणेहारी तथा श्रीकृष्णभगवान् अर्जुनका संवाद-

रूप तथा अद्वैतरूप अमृतकी वर्षा करणेहारी तथा सप्तशत ७०० श्लोकरूप गीताउपनिषद् नामा ब्रह्मविद्या स्थापन करता भया। ता गीतारूप ब्रह्मविद्याका अज्ञानसहित सर्व प्रपंचका अभावरूप तथा सत् चित् आनंदस्वरूप तथा जीवतैं अभिन्न अद्वितीय ब्रह्मरूप मोक्षही परम प्रयोजन है। तिसी अद्वितीय ब्रह्मरूप मोक्षकूं शास्त्रोंविषे विष्णुका परमपद कहे हैं। और तिसी अद्वितीय ब्रह्मरूप मोक्षकी प्राप्तिवासतै सृष्टिके आदिकालविषे सर्वज्ञ ईश्वरनैं कर्म, उपासना, और ज्ञान या तीन कांडोंकरिकै युक्त ऋगादिक वेद उत्पन्न करे हैं। और यह अष्टादश अध्यायरूप भगवद्गीताभी ऋगादि वेदरूप है। यातैं यह भगवद्गीताभी षट्षट् अध्यायरूप तीन षट्कोंकरिकै यथाक्रमतैं कर्म, उपासना और ज्ञान या तीन कांडरूप है। तहां षट् अध्यायरूप प्रथम षट्कविषे तौ कर्मनिष्ठा कथन करी है। और षट् अध्यायरूप द्वितीय षट्कविषे तौ भगवद्भक्तिनिष्ठारूप उपासना कथन करी है और षट् अध्यायरूप तृतीय षट्कविषे तौ ज्ञाननिष्ठा कथन करी है। तहां मध्यके षट्कविषे स्थित जो भगवद्भक्तिनिष्ठा है सा भगवद्भक्तिनिष्ठा कर्मनिष्ठाकी प्राप्तिविषे प्रतिबंधक जो पापरूप विघ्न हैं तिन सर्व विघ्नोंकूं नाश करणेहारी है। यातैं सा भगवद्भक्तिनिष्ठा कर्मनिष्ठाविषे तथा ज्ञाननिष्ठाविषे दोनोंविषे अनुगत है। या कारणतैंही सा भगवद्भक्तिनिष्ठा कर्ममिश्रा, शुद्धा और ज्ञानमिश्रा या भेदकरिकै तीन प्रकारकी होवै है। तहां या गीताके प्रथम षट्कविषे स्थित सा भगवद्भक्तिनिष्ठा कर्ममिश्रा कही जावै है। और द्वितीय षट्कविषे स्थित सा भगवद्भक्तिनिष्ठा शुद्धा कही जावै है। और तृतीय षट्कविषे स्थित सा भगवद्भक्तिनिष्ठा ज्ञानमिश्रा कही जावै है। तहां कर्मनिष्ठाकरिकै मिली हुई भगवद्भक्तिनिष्ठाका नाम कर्ममिश्रा है। और ज्ञाननिष्ठाकरिकै मिली हुई भगवद्भक्तिनिष्ठाका नाम ज्ञानमिश्रा है। और केवल भगवद्भक्तिनिष्ठाका नाम शुद्धा है। इस प्रकार यह भगवद्गीता ऋगादिक वेदोंकी न्यांई तीन कांडरूप है। तहां या गीताके प्रथम षट्करूप कर्मकांडविषे कर्मोंके तथा तिन कर्मोंके त्यागके निरूपणरूप मार्गकरिकै अनेक प्रकारकी युक्तियोंसैं त्वंपदका अर्थरूप कूटस्थ शुद्ध आत्माका निरूपण करा है। और द्वितीय षट्करूप उपासनाकांडविषे भगवद्भक्तिनिष्ठाके वर्णनरूप मार्गकरिकै तत्पदार्थरूप परमात्मा देवका निरूपण करा है। तृतीय षट्करूप ज्ञानकांडविषे तिन शोधित तत्त्वंपदार्थोंका अभेदरूप महावाक्योंका अर्थ निरूपण करा है। इस प्रकारसैं तीन षट्करूप तीन कांडोंका परस्पर संबंध संभवै है। और पूर्व पूर्व अध्यायके अर्थका उत्तर उत्तर अध्यायके अर्थसाथि जिस जिस प्रकारका संबंध संभवै है। सो सो संबंध तिस तिस अध्यायके निरूपणकालविषे कथन करैंगे। अब या अष्टादश अध्यायरूप भगवद्गीताविषे जो जो मोक्षके साधन विस्तारकरिकै निरूपण करे हैं तिन सर्व साधनोंका प्रथम संक्षेपतैं निरूपण करे हैं। यह अधिकारी पुरुष प्रथम स्वर्गादिक फलकी प्राप्ति करणेहारे काम्यकर्मोंका परित्याग करिकै तथा नरकादिक दुःखोंकी प्राप्ति करणेहारे

हिंसादिक निषिद्ध कर्मोंका परित्याग करिकै फलकी इच्छातैं रहित केवल निष्काम कर्मोंकूं करै । तिन निष्काम कर्मोंविषेभी परमेश्वरके नामोंका जप तथा स्तुति आदिक परधर्मरूप हैं । ता निष्काम कर्मोंकरिकै तथा परमेश्वरके जप स्तुति आदिकोंकरिकै या अधिकारी पुरुषका चित्त प्रतिबंधकरूप सर्व पापोंतैं रहित होइकै विचार करणेयोग्य होवै है । तिसतैं अनंतर या अधिकारी पुरुषविषे नित्य अनित्य वस्तुका विवेक उत्पन्न होवै है । तिस विवेकतैं अनंतर इस लोकके विषयसुखोंविषे तथा स्वर्गादिक लोकोंके विषयसुखोंविषे दोषदृष्टिपूर्वक वशीकार नामा वैराग्य उत्पन्न होवै है । तिस वैराग्यकी प्राप्तितैं अनंतर शम, दम, श्रद्धा, समाधान, उपरति और तितिक्षा या षट्संपत्तिकी प्राप्तिकरिकै सर्वका परित्यागरूप संन्यास प्राप्त होवै है । ता संन्यासतैं अनंतर या अधिकारी पुरुषकूं मोक्षके प्राप्तिकी इच्छारूप मुमुक्षुता प्राप्त होवै है । ता मुमुक्षुताकी प्राप्तितैं अनंतर यह अधिकारी पुरुष श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ गुरुके समीप जावै है । तिसतैं अनंतर यह अधिकारी पुरुष ता ब्रह्मवेत्ता गुरुके मुखतैं वेदांतशास्त्रका श्रवण करे है । तथा ता श्रवण करे हुए अर्थका मनन करे है । ता श्रवणमननविषेही सर्व उत्तरमीमांसाशास्त्रका उपयोग है । ता श्रवणमननकी परिपक्कतातैं अनंतर यह अधिकारी पुरुष निदिध्यासनकूं प्राप्त होवै है । ता निदिध्यासनविषेही संपूर्ण योगशास्त्रका उपयोग है । तहां श्रवणकरिकै वेदांतशास्त्ररूप प्रमाणगत असंभावनाकी निवृत्ति होवै है । और मननकरिकै आत्मारूप प्रमेयगत असंभावनाकी निवृत्ति होवै है । और निदिध्यासनकरिकै देहादिकोंविषे आत्मत्वबुद्धिरूप विपरीतभावनाकी निवृत्ति होवै है । तिसतैं अनंतर ता असंभावनादिक दोषोंतैं रहित चित्तविषे गुरूपदिष्ट महावाक्यतैं ब्रह्मात्माका साक्षात्कार उत्पन्न होवै है । ता ब्रह्मात्मसाक्षात्कारके उत्पन्न हुए या अधिकारी पुरुषके अविद्याकी निवृत्ति होवै है । ता आवरणशक्तिप्रधान अविद्याके निवृत्त हुएतैं अनंतर या अधिकारी पुरुषके भ्रम तथा संशय निवृत्त होवै हैं । तथा भावी जन्मोंकी प्राप्ति करणेहारे सर्व संचितकर्म नाशकूं प्राप्त होवै हैं । और ता आत्मसाक्षात्कारके प्रभावतैं आगामी कर्मोंकी उत्पत्तिही होवै नहीं । परंतु प्रारब्धकर्मरूप विक्षेपके वशतैं या अधिकारी पुरुषकी वासना निवृत्त होवै नहीं । जिस कारणतैं सा वासना सर्वतैं बलवान् है । ऐसी बलवान् वासनाभी संयमरूप उपायकरिकै निवृत्त होवै है । तहां धारणा, ध्यान और समाधि या भेदकरिकै सो संयम तीन प्रकारका होवै है । ता संयमकी प्राप्तिवासतैंही प्रथम यम, नियम, आसन, प्राणायाम और प्रत्याहार या पांचोंका उपयोग होवै है । और या अधिकारी पुरुषकूं ईश्वरके प्रणिधानतैं सा समाधि शीघ्रही प्राप्त होवै है । ता समाधिकरिकै या अधिकारी पुरुषका मनोनाश होवै है । तथा वासनाक्षय होवै है । और तत्त्वज्ञान, मनोनाश और वासनाक्षय या तीनोंका एककालविषे अभ्यास कीयेतैं या अधिकारी पुरुषकूं जीवन्मुक्तिकी प्राप्ति होवै है । इसी जीवन्मुक्तिकी प्राप्तिवासतै श्रुतिविषे विद्वत्संन्यासका कथन करा

है। और पूर्व सविकल्पसमाधिकरिकै निरोधकूं प्राप्त भया जो चित्त है ता निरुद्धचित्तविषे तीन भूमिकावाली निर्विकल्पसमाधि उत्पन्न होवै है। तहां प्रथम भूमिकाविषे तौ यह विद्वान् पुरुष अपणी इच्छातैं उत्थानकूं प्राप्त होवै है। और द्वितीयभूमिकाविषे सो विद्वान् पुरुष दूसरे किसीकरिकै बोधन करा हुआ उत्थानकूं प्राप्त होवै है। और तृतीय भूमिकाविषे सो विद्वान् पुरुष अपणी इच्छाकरिकै तथा किसी दूसरेकरिकै उत्थानकूं प्राप्त होवै नहीं। किंतु सर्व कालविषे ताकी ब्रह्माकारवृत्ति रहे है। ऐसे निर्विकल्पसमाधिवान् पुरुषकूंही शास्त्रविषे ब्राह्मण कहे हैं। तथा ब्रह्मविद्वरिष्ठ कहे हैं। तथा गुणातीत कहे हैं। तथा स्थितप्रज्ञ कहे हैं। तथा विष्णुभक्त कहे हैं। तथा अतिवर्णाश्रमी कहे हैं। तथा जीवन्मुक्त कहे हैं। तथा आत्मरति कहे हैं। ऐसा जीवन्मुक्त पुरुष कृतकृत्यभावकूं प्राप्त भया है। यातैं शास्त्रभी ता जीवन्मुक्त पुरुषतैं निवृत्त होवै है। तात्पर्य यह। ता जीवन्मुक्त पुरुषऊपरि शास्त्रका कोईभी विधिनिषेध नहीं है। किंवा "यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ॥ तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशंते महात्मनः" ॥ अर्थ यह। जिस अधिकारी पुरुषकी परमात्मा देवविषे परम भक्ति है। और जैसी परमात्मा देवविषे परम भक्ति है। तैसीही गुरुविषे परम भक्ति है। तिस अधिकारी पुरुषके बुद्धिविषेही यह शास्त्रप्रतिपादित अर्थ प्रकाशमान होवै है इति ॥ या श्रुतिप्रमाणतैं शरीरमनवाणीकृत भगवद्भक्तिका सर्व अवस्थावोंविषे उपयोग सिद्ध होवै है। तहां पूर्व पूर्व भूमिकाविषे करी हुई सा भगवद्भक्ति उत्तर उत्तर भूमिकाकी प्राप्ति करेहै। ता भगवद्भक्तितैं विना विघ्नोंकी बाहुल्यतातैं फलकी प्राप्ति होणी अत्यंत दुर्लभ है। यह वार्त्ता "पूर्वाभ्यासेन तनैव ह्रियते ह्यवशोपि सः। अनेकजन्मसंसिद्धः" इत्यादिक भगवान्के वचनोंतैंही सिद्ध होवै है। किंवा। पूर्व पूर्व जन्मोंविषे उत्पन्न भये जो संस्कार हैं। ते संस्कार अचिंत्यशक्तिवाले हैं। तिन पूर्वसंस्कारोंके प्रभावतैं जो कोई पुरुष आकाशफलपातकी न्यांई पूर्वही कृतकृत्यभावकूं प्राप्त होवै है। तिस पुरुषके वासतैंभी शास्त्रका आरंभ करा जावै नहीं। जिस वासतै पूर्वसिद्धिसाधनोंके अभ्यासतैं भगवत्कृपा अत्यंत दुर्विज्ञेय है। इस प्रकार पूर्वभूमिकाके सिद्ध हूएभी उत्तर उत्तर भूमिकाके प्राप्तिवासतै यह अधिकारी पुरुष भगवद्भक्तिकूं अवश्यकरिकै करै। ता भगवद्भक्तितैं विना सा उत्तरभूमिका सिद्ध होवै नहीं। किंवा। जैसे पूर्व अवस्थाविषे ता भगवद्भक्तिके फलकी कल्पना होवे है। तैसे जीवन्मुक्तिदशाविषे ता भगवद्भक्तिके फलकी कल्पना होवै नहीं। किंतु ता जीवन्मुक्त विद्वान् पुरुषविषे जैसे अद्वेष्टृत्व, अदंभित्व आदिक धर्म स्वभावभूत होइकै रहे हैं। तैसे सा भगवद्भक्तिभी स्वभावभूत होइकै रहे है। यह वार्त्ता "तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते" इत्यादिक वचनोंकरिकै श्रीभगवान्नैं प्रतिपादन करी है। या कारणतैं सो जीवन्मुक्त विद्वान् पुरुषही मुख्य प्रेमभक्त कह्या जावै है। इत्यादिक सर्व मोक्षके साधन श्रीकृष्णभगवान्नैं या गीताशास्त्रविषे कथन करे हैं। तिन मोक्षके साधनोंकूं देखिकरिकै श्रीमच्छंकराचार्यनैं तथा स्वामीशंकरानं-

दनैं तथा स्वामीमधुसूदननैं तथा नीलकंठपंडितनैं बहुत उत्साहपूर्वक या गीताशास्त्रऊपरि संस्कृत टीका करी हैं। तिन संस्कृत टीकावोंतैं यद्यपि व्याकरणादिक साधनसंपन्न मुमुक्षु जनोंकूं या गीताशास्त्रके अर्थका बोध होइ सके है । तथापि तिन संस्कृत टीकावोंतैं व्याकरणादिक साधनोंतैं रहित केवल भाषाके पठन करणेहारे मुमुक्षु जनोंकूं या गीताशास्त्रके अर्थका बोध होइ सकै नहीं। यातैं तिन मुमुक्षु जनोंके प्रति या गीताशास्त्रके अर्थका बोध करावणेवासतै हम तिन संस्कृत टीकावोंके अभिप्रायकूं लैके यह गीतागूढार्थदीपिका नामा प्राकृत टीकाका आरंभ करे हैं इति । तहां निष्काम कर्मोंका जो अनुष्ठान है तिसकूंही शास्त्रविषे मोक्षका मूलरूपकरिकै कथन करा है। और शोकमोहादिक पापरूप असुरता मोक्षकी प्राप्तिविषे प्रतिबंधक हैं। काहेतैं तिन शोकमोहादिक असुरोंकी प्राप्तितैंही यह पुरुष अपणे वर्णाश्रमके धर्मतैं भ्रष्ट होवै है तथा शास्त्रनिषिद्ध कर्मविषे प्रवृत्त होवै है तथा फलकी इच्छापूर्वक अहंकारसहित नानाप्रकारकी क्रियाकूं करै है। इस प्रकार शोकमोहादिक पापरूप असुरोंकरिकै नित्यही युक्त हुआ यह पुरुष मोक्षरूप पुरुषार्थकूं न प्राप्त होइकै जन्ममरणादिक अनेक दुःखोंकूं प्राप्त होवै है। सो दुःख स्वभावतैंही सर्व प्राणियोंके द्वेषका विषय है। यातैं ता दुःखकी निवृत्तिवासतै ता दुःखके साधनरूप शोकमोहादिक अवश्यकरिकै त्याग करणे योग्य हैं। और या अनादि संसारविषे अनेक जन्मोंकरिकै ते शोकमोहादिक दुःखके कारण दृढताकूं प्राप्त हुए हैं। यातैं तिन शोकमोहादिकोंका त्याग करणा अत्यंत कठिन है। और तिन शोकमोहादिकोंकी निवृत्तितैं विना मोक्षकी प्राप्ति होवै नहीं। यातैं ते हमारे शोकमोहादिक किस उपाय करिकै नाशकूं प्राप्त होवैंगे। इस प्रकारकी उत्कट इच्छावान् जो मुमुक्षु जन है। ताके बोध करणेवासतै श्रीकृष्णभगवान् या गीताशास्त्रकूं कथन करता भया है। ता गीताशास्त्रविषे "अशोच्यानन्वशोचस्त्वं" इत्यादिक श्लोकोंकरिकै शोकमोहादिक असुरोंकी निवृत्तिके उपायका उपदेश करिकै अपणे वर्णाश्रमके धर्मोंके अनुष्ठानतैं तुम मोक्षरूप पुरुषार्थकूं प्राप्त होवौ या प्रकारका जो भगवान्का उपदेश है। सो उपदेश सर्व मुमुक्षु जनोंके प्रति साधारण है। केवल एक अर्जुनके प्रति सो उपदेश नहीं है॥ शंका— श्रीकृष्णभगवान्का जो कदाचित् सर्व मुमुक्षु जनोंके प्रति साधारणही उपदेश होवै। तौ या गीताशास्त्रविषे श्रीकृष्णभगवान्का तथा अर्जुनका संवादरूप आख्यायिका किसवासतै रखी है॥ समाधान— जैसे उपनिषदोंका उपदेश सर्व मुमुक्षु जनोंके प्रति साधारण हुआभी तिन उपनिषद्वोंविषे जो जनकयाज्ञवल्क्यादिकोंका संवादरूप आख्यायिका हैं। ते आख्यायिका तिस तिस उपनिषद्रूप ब्रह्मविद्याके स्तुतिवासतै है। तैसे या गीताशास्त्रविषे जो श्रीकृष्णभगवान् अर्जुनका संवादरूप आख्यायिका है। सा आख्यायिकाभी या गीतारूप ब्रह्मविद्याकी स्तुतिवासतै है। ता स्तुतिका यह प्रकार है। सर्व लोकविषे प्रसिद्ध है महान् भाव जिसका ऐसा जो अर्जुन है।

सो अर्जुन राज्य, गुरु, पुत्र, मित्र आदिक पदार्थोंविषे मैं इनोंका हूं यह मेरे हैं या प्रकारकी बुद्धिकरिकै स्नेहकूं प्राप्त होता भया । ता स्नेहकरिकै उत्पन्न भया जो शोक, मोह ता शोकमोहकरिकै नष्ट होइ गया है विवेकविज्ञान जिसका ऐसा सो अर्जुन पूर्वस्वभावतैंही क्षत्रियोंके धर्मरूप युद्धविषे प्रवृत्त हुआभी ता शोकमोहके प्रभावतैं ता धर्मयुद्धतैं उपराम होता भया । तथा संन्यासीयोंका धर्मरूप जो भिक्षावृत्तितैं जीवन है ते भिक्षाजीवनादिक धर्म यद्यपि क्षत्रिय राजावोंकूं शास्त्रकरिकै निषिद्ध हैं । तथापि सो अर्जुन ता शोकमोहके वशतैं ता भिक्षाजीवनरूप परधर्मके करणेवासतै प्रवृत्त होता भया । इस प्रकार सो अर्जुन ता शोकमोहके वशतैं महान् अनर्थविषे मगन होता भया । ऐसा अर्जुन श्रीकृष्णभगवान्के उपदेशतैं या गीतारूप ब्रह्मविद्याकूं प्राप्त होइकै ता शोकमोहतैं रहित होइकै पुनः अपणे युद्धरूप धर्मविषे प्रवृत्त होता भया । ताकरिकै सो अर्जुन कृतकृत्यभावकूं प्राप्त होता भया । ऐसे महान् प्रयोजनकी प्राप्ति करणेहारी यह गीतारूप ब्रह्मविद्या है । यातैं यह गीतारूप ब्रह्मविद्या अत्यंत श्रेष्ठ है । या प्रकार या गीतारूप ब्रह्मविद्याकी स्तुति करणेवासतै श्रीकृष्णभगवान् अर्जुनका संवादरूप आख्यायिका या गीताशास्त्रविषे स्थित है । यातैं अर्जुनशब्दकरिकै या गीताशास्त्रके उपदेशका अधिकारी मात्र कथन करा है । या कारणतैंही युद्धरूप स्वधर्मविषे पूर्व अर्जुनकी प्रवृत्ति हुएभी ता युद्धरूप स्वधर्मतैं निवृत्तिका कारणरूप शोक मोह "कथं भीष्ममहं संख्ये" इत्यादिक वचनोंकरिकै अर्जुननैं दिखाये हैं । या प्रकार आगे कथन करैंगे । तहां युद्धरूप स्वधर्मविषे विवेकतैं विनाही अर्जुनकी किस निमित्ततैं प्रवृत्ति भई है या प्रकारकी जिज्ञासाके हुए "दृष्ट्वा तु पांडवानीकं" इत्यादिक वचनकरिकै परसैनाकी चेष्टाही ता प्रवृत्तिविषे निमित्त कथन करा है । तिस अर्थकी सिद्धिवासतै "धर्मक्षेत्रे" इत्यादि श्लोककरिकै धृतराष्ट्रका प्रश्न संजयके प्रति है । और "धृतराष्ट्र उवाच" यह वैशंपायनका वचन जन्मेजयके प्रति है । तहां पूर्व पांडवोंके जयके अनेक प्रकारके कारणोंकूं श्रवण करिकै अपणे पुत्रोंके राज्यतैं भ्रष्टपणेतैं भयभीत हुआ सो धृतराष्ट्र अपणे पुत्रोंके जयकी इच्छा करता हुआ या प्रकार संजयसैं पूछता भया ।

(मू० श्लो०) धृतराष्ट्र उवाच ॥ धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः ॥ मामकाः पांडवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥ १ ॥ (पदच्छेदः) धर्मक्षेत्रे । कुरुक्षेत्रे । समवेताः । युयुत्सवः । मामकाः । पांडवाः । च । एव । किं । अकुर्वत । संजय ॥ १ ॥ (पदार्थः) हे संजय । धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रविषे एकठे हुए तथा युद्धकी इच्छा करते हुए मेरे पुत्र तथा पांडुराजाके पुत्र क्या करते भये ॥ १ ॥ ॥ ३ ॥

टीका । जैसे उत्तम भूमिरूप क्षेत्र व्रीहि यवादिक अन्नके उत्पत्तिका तथा वृद्धिका कारण होवै है । तैसे पूर्व अविद्यमान धर्मके उत्पत्तिका जो कारण होवै । तथा पूर्व विद्यमान धर्मके वृद्धिका जो कारण होवै । अथवा धर्मके क्षयतैं जो रक्षा करणेहारा होवै । ताका नाम धर्मक्षेत्र है । और कुरुदेशके अंतर जो स्थित होवै ताका नाम कुरुक्षेत्र है । इस प्रकार निवासमात्र करणेकरिकै धर्मकी तथा धर्मके फलकी प्राप्ति करणेहारा जो धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्र है ॥ सो श्रुति स्मृति आदिक सर्व शास्त्रोंविषे प्रसिद्ध है । तहां श्रुति ॥ "यदनु कुरुक्षेत्रं देवानां देवयजनं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनं इति" । अर्थ यह । जो कुरुक्षेत्र सर्व देवतावोंका देवयजनरूप है । तथा सर्व भूतप्राणीयोंकूं ब्रह्मरूप मोक्षके प्राप्तिका स्थानरूप है इति ॥ यह श्रुति जाबालउपनिषद्विषे बृहस्पतिनैं याज्ञवल्क्यके प्रति कथन करी है । और " कुरुक्षेत्रं देवयजनं" यह श्रुति शतपथब्राह्मणविषे कथन करी है । इत्यादिक श्रुतिस्मृतिप्रमाणकरिकै सिद्ध जो कुरुक्षेत्र है । ता धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रविषे युद्धकी इच्छा करिकै एकट्ठे हूए जो दुर्योधनादिक मेरे पुत्र हैं । तथा युधिष्ठिरादिक पांडव हैं । ते सर्व क्या कार्य करते भये । शंका । (युयुत्सवः) या विशेषणकरिकै धृतराष्ट्रनैं अपणे पुत्रोंविषे तथा पांडवोंविषे युद्ध करणेकी इच्छा कथन करी । और या लोकविषे यह नियम है । जिस पुरुषकूं जिस कार्य करणेकी पूर्व इच्छा होवै है । सो पुरुष तिस इच्छाके अनुसार तिसी कार्यविषे प्रवृत्त होवै है । अन्य कार्यविषे प्रवृत्त होवै नहीं । यातैं ता पूर्व युद्धकी इच्छाके अनुसार तिन दुर्योधनादिकोंकी युद्धरूप कार्यविषेही प्रवृत्ति होवैंगी । अन्य किसी कार्यविषे तिनोंकी प्रवृत्ति होवैंगी नहीं । यातैं तिनोंका परस्पर किस प्रकारका युद्ध होता भया या प्रकारका प्रश्नही ता धृतराष्ट्रकूं करणेयोग्य था । ता प्रश्नका परित्याग करिकै मेरे पुत्र तथा पांडव क्या कार्य करते भये यह जो धृतराष्ट्रनैं प्रश्न करा है सो असंगत है । समाधान । ता धृतराष्ट्रके प्रश्नका यह अभिप्राय है । ते हमारे दुर्योधनादिक पुत्र तथा युधिष्ठिरादिक पांडव पूर्व उत्पन्न हूई युद्धकी इच्छाके अनुसार युद्धकूंही करते भये । अथवा किसी निमित्त करिकै ता युद्धकी इच्छाके निवृत्त हूए कोई दूसराही कार्य करते भये । तहां युद्धकी इच्छाके निवृत्तिविषे दो प्रकारका कारण संभवै है ॥ एक तौ दृष्टभय दूसरा अदृष्टभय । तहां भीष्म अर्जुनादिक महान शूरवीरोंके दर्शनतैं उत्पन्न भया जो भय है । सो दृष्टभयरूप युद्धके निवृत्तिका कारण प्रसिद्धही है ॥ यातैं सो दृष्टभयरूप निमित्त ता धृतराष्ट्रनैं कथन करा नहीं । और दूसरे अदृष्टभयरूप कारणके कथन करणेवासतै ता धृतराष्ट्रनैं कुरुक्षेत्रका धर्मक्षेत्र यह विशेषणदीया है । ऐसे धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रविषे प्राप्त हूए जो युधिष्ठिरादिक पांडव हैं । ते पांडव पूर्वही धर्मात्मा होणेतैं जो कदाचित् दोनों पक्षोंविषे होणेहारे हिंसाजन्य अधर्मतैं भयभीत होइकै ता युद्धतैं निवृत्त होइ जावैंगे । तौ हमारे दुर्योधनादिक पुत्र अवश्यकरिकै राज्यकूं प्राप्त होवैंगे । अथवा पूर्व स्वभावतैंही पापात्मा जो हमारे दु-

॥ ४ ॥ र्योधनादिक पुत्र हैं। तिन हमारे पुत्रोंका ता धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रके प्रभावतैं जो कदाचित् अंतःकरण शुद्ध हूआ होवैगा। ता चित्तकी शुद्धिकरिकै पश्चात्तापकूं प्राप्त हूए ते हमारे पुत्र पूर्व कपटकरिकै लिये हूए राज्यकूं जो कदाचित् तिन पांडवोंके तांई देदेवैंगे। तौ ते हमारे पुत्र युद्धतैं विनाही नाशकूं प्राप्त हूए। इस प्रकार अपणे पुत्रोंकूं राज्यकी प्राप्तिविषे तथा पांडवोंकूं राज्यकी अप्राप्तिविषे अत्यंत दृढ उपायकूं नहीं देखाता हूआ जो धृतराष्ट्र है। ता धृतराष्ट्रका सो महान उद्वेगही ता प्रश्नका बीज है। तहां (हे संजय) या संबोधनकरिकै ता धृतराष्ट्रनैं यह अर्थ बोधन करा॥ रागद्वेषादिक दोषोंकूं जो भली प्रकारकरिकै जय करे है ताका नाम संजय है। ऐसे रागद्वेषतैं रहित आप हो। यातैं पक्षपाततैं रहित होइकै आप हमारे प्रति सर्व वृत्तांत कथन करो। इहां यद्यपि (मामकाः किमकुर्वत) या प्रकारके वचनमात्रकरिकैही ता धृतराष्ट्रके प्रश्नकी सिद्धि होइ सकै है। काहेतैं ते युधिष्ठिरादिक पांडवभी ता धृतराष्ट्रकेही संबंधी हैं। यातैं (पांडवाः) यह कहणा व्यर्थ है। तथापि (पांडवाः) या शब्दके भिन्न कहणेकरिकै ता धृतराष्ट्रनैं तिन पांडवोंविषे ममत्वका अभाव दिखाइकै तिन पांडवोंविषे अपणे द्रोहकूं सूचन करा इति॥ १॥ ॥ हे जनमेजय। इस प्रकार कृपारूप नेत्रोंतैं रहित तथा लोकप्रसिद्ध नेत्रोंतैं रहित तथा अपणे पुत्रोंके स्नेहमात्रकरिकै युक्त ऐसा जो धृतराष्ट्र है ता धृतराष्ट्रके प्रश्नकूं श्रवण करिकै तथा ता धृतराष्ट्रके अभिप्रायकूं जाणिकरिकै सो धर्मात्मा संजय ता धृतराष्ट्रके प्रति यह वचन कहता भया॥

(मू. श्लो.) संजय उवाच। दृष्ट्वा तु पांडवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा। आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत्॥ २॥ (पदच्छेदः) दृष्ट्वा। तु। पांडवानीकं। व्यूढं। दुर्योधनः। तदा। आचार्यं। उपसंगम्य। राजा। वचनं। अब्रवीत॥ २॥ (पदार्थः) हे धृतराष्ट्र ता संग्रामके आरंभकालविषे राजा दुर्योधन व्यूहरचनायुक्त पांडवोंकी सैनाकूं देखिकरिकै द्रोणाचार्यके समीप जाइकै या प्रकारका वचन कहता भया॥ २॥ ॥ ॥ ॥ ॥

टीका। तहां युधिष्ठिरादिक पांडवोंविषे भीष्मादिक वीर पुरुषोंतैं दृष्टभयकी संभावनामात्रभी होवै नहीं। और बांधवोंकी हिंसाजन्य पापरूप अदृष्टतैं जो अर्जुनकूं भय प्राप्त हूआ था। सो केवल भ्रांतिकरिकै हूआ था। सो अर्जुनका अदृष्टभयभी श्रीभगवान्नैं ब्रह्मविद्याके उपदेशतैं निवृत्त करा। या प्रकार पांडवोंकी उत्कृष्टता बोधन करणेवासतै संजयनैं (दृष्ट्वा तु) यह तुशब्द कथन करा है। तहां हमारे दुर्योधनादिक पुत्र धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रके प्रभावतैं शु- ॥ ४ ॥

भबुद्धिवाले होइकै पांडवोंके तांई राज्य समर्पण करैंगे या प्रकारकी शंकाकरिकै तूं गिलानिकूं मत प्राप्त होउ या प्रकार ता धृतराष्ट्रके संतोष करावणेवासतै सो संजय प्रथम ता दुर्योधनके दुष्ट स्वभावका वर्णन करे है। (दृष्ट्वेति) हे धृतराष्ट्र धृष्टद्युम्नादिक शूरवीर पुरुषोंनैं व्यूहरचना करिकै स्थापन करी जो पांडवोंकी सैना है। ता सैनाकूं सो दुर्योधन राजा अपणे नेत्रोंसैं प्रत्यक्ष देखिकरिकै धनुर्विद्याके संप्रदायकी प्रवृत्ति करणेहारे द्रोणाचार्यके समीप आपही जाइकै यह वक्ष्यमाण वचन कहता भया। ता द्रोणाचार्यकूं अपणे समीप बुलाइकै सो वचन नहीं कहता भया। तहां सो दुर्योधन राजा ता द्रोणाचार्यके समीप आपही जाता भया या कहणेकरिकै ता दुर्योधनविषे पांडवोंकी सैनाके दर्शनतैं उत्पन्न भया भय सूचन करा। तहां सो दुर्योधन यद्यपि भयकरिकै अपणी रक्षावासतैं ता द्रोणाचार्यके समीप जाता भया। तथापि सो दुर्योधन राजनीतिविषे बहुत कुशल है। यातैं आचार्यके समीप शिष्यनैं आपही चलिके जाणा या प्रकार आचार्यकी महानताके व्याजकरिकै अपणे भयकूं गुह्य राखता भया। या प्रकारके अर्थके बोधन करणेवासतै संजयनैं दुर्योधनका राजा यह विशेषण दीया है। यद्यपि द्रोणाचार्यके प्रति सो राजा दुर्योधन कहता भया इतनैं कहणेमात्रकरिकैही निर्वाह होइ सकै है। वचन या पदके कहणेका कछु प्रयोजन नहीं है। तथापि वचन या पदके कहणेकरिकै ता वाक्यविषे संक्षिप्तत्व, बहु अर्थप्रतिपादकत्व इत्यादिक अनेक गुणवत्त्व कथन करा। अथवा सो दुर्योधन राजा केवल वचनमात्रही कहता भया। किंचित्मात्रभी अर्थ नहीं कहता भया। यह अर्थ वचनपदकरिकै सूचन करा इति ॥ २ ॥ तहां जिस प्रकारका वचन ता दुर्योधननैं द्रोणाचार्यके समीप जाइकै कथन करा था। ता वचनका (पश्यैतां) इसतैं आदि लैके (तस्य संजनयन् हर्ष) इसतैं पूर्वग्रंथकरिकै विस्तारतैं निरूपण करे हैं। तहां या द्रोणाचार्यके अत्यंत प्रिय शिष्य जो पांडव हैं। तिन पांडवोंविषे या द्रोणाचार्यका अत्यंत स्नेह है। यातैं यह द्रोणाचार्य हमारे पक्षविषे स्थित होइकै तिन पांडवोंके साथि युद्ध नहीं करैगा। या प्रकारकी संभावना अपणे मनविषे करिकै सो दुर्योधन राजा तिन पांडवोंऊपरि ता द्रोणाचार्यका क्रोध उत्पन्न करणेवासतै ता द्रोणाचार्यके समीप तिन पांडवोंकी अविज्ञाकूं कथन करता हूआ या प्रकारका वचन कहता भया ॥

(मू. श्लो.) पश्यैतां पांडुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूं। व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥ ३ ॥ (पदच्छेदः) ॥ पश्य। एतां। पांडुपुत्राणां। आचार्य। महतीं। चमूं। व्यूढां। द्रुपदपुत्रेण। तव। शिष्येण। धीमता ॥ ३ ॥ (पदार्थः) हे आचार्य पांडुराजाके पुत्रोंकी इस महान सैनाकूं तूं देख जा सैना तुमारे बुद्धिमान शिष्य द्रुपदपुत्रनैं व्यूहरचनायुक्त करी है ॥ ३ ॥

टीका। हे आचार्य आपसरीखे महान् भाव पुरुषोंकीभी अविज्ञाकरिकै तथा भयतैं रहित होइकै अत्यंत समीप स्थित जो यह पांडवोंकी सैना है। सा

सैना अनेक अक्षौहिणी संख्यावाली होणेतैं महान् है। या कारणतैंही सा सैना निवृत्त करणेकूं अशक्य है। ऐसी पांडवोंकी सैनाकूं आप नेत्रोंकरिकै प्रत्यक्ष देखो। मैं आपका शिष्य हूं। यातैं मैं केवल आपके आगे प्रार्थना करताहूं। कोई आपकूं आज्ञा नहीं करता। ता हमारी प्रार्थनाकूं अंगीकार करिकै जबी आप ता पांडवोंकी सैनाकूं देखोंगे। तबी तिन पांडवोंके अविज्ञानकूं आपही निश्चय करौंगे। शंका। तिन पांडवोंनैं करी जो हमारी अविज्ञा है। सा अविज्ञा निवृत्त करणेकूं अशक्य है। यातैं सा अविज्ञा हमारेकूं सहारणीही उचित है। या प्रकारकी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए॥ तिस अविज्ञाके निवृत्त करणेका उपाय आपकूं अत्यंत सुगम है या प्रकारका उत्तर सो दुर्योधन ता द्रोणाचार्यके प्रति कथन करे है (व्यूढां तव शिष्येण इति) हे आचार्य। तुमारेतैं धनुर्विद्या सिख्या हूआ जो द्रुपद राजाका पुत्र धृष्टद्युम्न नामा तुमारा बुद्धिमान् शिष्य है। ता द्रुपदपुत्रनैं यह पांडवोंकी सैना शकटाकार तथा पद्मादि आकार करी हूई है। और शिष्यकी अपेक्षाकरिकै गुरुविषे अधिकताही होवै है। यह वार्त्ता सर्व लोकशास्त्रविषे सिद्ध है। यातैं आपकूं तिनोंकी अविज्ञाके निवृत्त करणेका उपाय अत्यंत सुगम है। इहां धृष्टद्युम्ननैं सा पांडवोंकी सैना व्यूहरचनायुक्त करी है या प्रकारका वचन नहीं कथन करिकै द्रुपदपुत्रनैं सा सैना व्यूहरचनायुक्त करी है या प्रकारका वचन जो दुर्योधननैं कथन करा है। सो द्रोणाचार्यके प्रति द्रुपद राजाका पूर्वला वैर सूचन करिकै क्रोधकी उत्पत्ति करणेवासतै सो वचन कथन करा है। और ता द्रुपदपुत्रका बुद्धिमान् यह जो विशेषण दुर्योधननैं कथन करा है। सो ता द्रुपदपुत्रकी आपनैं उपेक्षा कदाचित्भी नहीं करणी या प्रकार ताकी उपेक्षाके अभावका बोधन करणेवासतै दीया है। यातैं हे आचार्य दूसरे सर्व कार्योंका परित्याग करिकै आप शीघ्रही चलिकै ता सैनाकूं देखो। अथवा या श्लोकके पदोंकी इस प्रकार योजना करणी (पांडुपुत्राणां) या पदका (आचार्य) या पदके साथि तथा (चमूं) या पदके साथि संबंध करणा। इस प्रकार तिन पदोंकी योजना करणेतैं यह अर्थ सिद्ध होवै है। हे पांडुपुत्रोंके आचार्य तिन पांडवोंकी सैनाकूं तूं देख। तिन पांडवोंविषेही तुमारा अत्यंत स्नेह है यातैं तिन पांडवोंकाही तूं आचार्य हैं। हमारा तूं आचार्य नहीं हैं। और तुमारे शिष्य द्रुपदपुत्रनैं यह सैना व्यूहरचनायुक्त करी है। या कहणेकरिकै ता दुर्योधननैं यह अर्थ सूचन करा। तुमारे नाश करणेवासतै उत्पन्न हूआभी यह द्रुपदपुत्र। तुमनैंही इसकूं धनुर्विद्या पढाई। यातैं यह तुमारी मूढताही हमारे अनर्थका कारण है। और सो द्रुपदपुत्र बुद्धिमान् है या कहणेकरिकै ता दुर्योधननैं यह अर्थ सूचन करा॥ इस द्रुपदपुत्रनैं अपणे शत्रुवोंतैंही तिन शत्रुवोंके मारणेका उपायरूप धनुर्विद्या ग्रहण करी है। या कारणतैं यह द्रुपदपुत्र अत्यंत बुद्धिमान् है। हे आचार्य ऐसे अपणे शिष्योंकी सैनाकूं देखिकरिकै आपकूंही आनंद होवैगा। जिस कारणतैं आप भ्रांतियुक्त हो।

भ्रांतितैं रहित दूसरे किसीकूं ता सैनाके दर्शनतैं आनंद होवैगा नहीं। जिसकूं यह पांडवोंकी सैना मैं दिखावों। यातैं आपंही चलिकै तिन पांडवोंकी सैनाकूं देखो। इस प्रकार ता द्रोणाचार्यकूं पांडवोंकी सैना दिखावता हूआ सो दुर्योधन ता आचार्यविषे अपणे गूढद्वेषकूं बोधन करता भया। इतनैं कहणेकरिकै संजयनैं ता धृतराष्ट्रके प्रति यह अर्थ बोधन करा। धर्मक्षेत्रविषे प्राप्त होइकैभी जिन तुमारे दुर्योधनादिक पुत्रोंकूं अपणे आचार्यविषेभी ऐसी द्वेषबुद्धि हूई है। ते दुर्योधनादिक ता धर्मक्षेत्रके प्रभावतैं पश्चात्तापकूं प्राप्त होइकै तिन पांडवोंकूं युद्ध करेतैं विनाही राज्य देदेवैंगे या प्रकारकी संभावना तुमनैं कदाचित्भी नहीं करणी इति ॥ ३ ॥ ॥ शंका ॥ सर्व शूरवीरोंविषे अप्रसिद्ध ऐसा जो द्रुपदपुत्र है। ता एक द्रुपदपुत्रकरिकै व्यूहरचनायुक्त करी हूई जो यह पांडवोंकी सैना है ता पांडवोंकी सैनाकूं हम सर्वोंविषे कोई एक साधारण शूरवीरभी जय करि लेवैंगा। तुम तिन पांडवोंकी सैनातैं किस वासतै भय करतेहो। ऐसी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए। सो दुर्योधन राजा (अत्र शूराः) इत्यादिक तीन श्लोकोंकरिकै तिन पांडवोंकी सैनाविषे स्थित शूरवीरोंके नाम वर्णन करेहै ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

(मू. श्लो.) अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि। युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥ ४ ॥ धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्। पुरुजित्कुंतिभोजश्च शैब्यश्च नरपुंगवः ॥ ५ ॥ युधामन्युश्च विक्रांत उत्तमौजाश्च वीर्यवान्। सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥ ६ ॥ (पदच्छेदः) अत्र। शूराः। महेष्वासाः। भीमार्जुनसमाः। युधि। युयुधानः। विराटः। च। द्रुपदः। च। महारथः ॥ ४ ॥ धृष्टकेतुः। चेकितानः। काशिराजः। च। वीर्यवान्। पुरुजित्। कुंतिभोजः। च। शैब्यः। च। नरपुंगवः ॥ ५ ॥ युधामन्युः। च। विक्रांतः। उत्तमौजाः। च। वीर्यवान्। सौभद्रः। द्रौपदेयाः। च। सर्वे। एव। महारथाः ॥ ६ ॥ (पदार्थः) इस पांडवोंकी सैनाविषे युद्धविषे भीमअर्जुनके समान तथा महान् धनुषोंवाले ऐसे शूरवीर बहुत विद्यमान हैं तिनोंके यह नाम हैं महारथीरूप युयुधान नामा राजा तथा विराट नामा राजा तथा द्रुपद नामा राजा ॥ ४ ॥ तथा विशेष पराक्रमवाला धृष्टकेतु नामा राजा तथा चेकितान नामा राजा तथा काशिराजा तथा सर्व मनुष्योंविषे श्रेष्ठ पुरुजित् नामा राजा तथा कुंतिभोज नामा राजा तथा शैब्य नामा राजा ॥ ५ ॥ तथा विशेष पराक्रमवाला युधामन्यु नामा राजा तथा वीर्यवाला उत्तमौजा नामा राजा तथा सौभद्र नामा राजा तथा द्रौपदीके पंच पुत्र यह सर्वही महारथी हैं ॥ ६ ॥ ॥ ॥

टीका । हे आचार्य या पांडवोंकी सैनाविषे केवल एक धृष्टद्युम्न नामा द्रुपदपुत्रही शूरवीर नहीं है जिसकरिकै या पांडवोंके सैनाकी हम उपेक्षा करि देवैं । किंतु या पांडवोंकी सैनाविषे दूसरेभी बहुत शूरवीर हैं । यातैं तिनोंके जय करणेवासतै हमारेकूं अवश्यकरिकै प्रयत्न करणा चाहीये । तिनोंकी उपेक्षा करणी योग्य नहीं है । अब तिन शूरवीरोंके विशेषणोंका कथन करे हैं (महेष्वासाः इति) इषु नाम बाणोंका है । ते बाणरूप इषु चलाइयें जिनोंकरिकै तिनोंका नाम इष्वासाः है । ऐसे धनुष् हैं । ते धनुषरूप इष्वासाः महान् हैं जिन शूरवीरोंके तिन शूरवीरोंका नाम महेष्वासाः है । तात्पर्य यह । ते शूरवीर बाणोंकरिकै दूरसैंही परसैनाके भगावणेविषे कुशल हैं इति । शंका । ते शूरवीर महान् धनुषोंवाले तौ हैं परंतु तिनोंविषे युद्ध करणेकी कुशलता नहीं होवैगी । ऐसी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए सो दुर्योधन राजा उत्तर कहे है (भीमार्जुनसमा युधि इति) हे आचार्य सर्व लोकविषे प्रसिद्ध है पराक्रम जिनोंका ऐसे जो भीम अर्जुन हैं । ता भीम अर्जुनके समानही जिन शूरवीरोंका युद्धविषे पराक्रम है । शंका । ऐसे पराक्रमवाले कौन कौन शूरवीर हैं । ऐसी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए सो दुर्योधन राजा ता द्रोणाचार्यकेप्रति तिन शूरवीरोंके नामोंका कथन करे है । (युयुधान इति) अतिशयकरिकै जो युद्धकूं करे है ताका नाम युयुधान है ऐसा सात्यकि नामा राजा है । और शत्रुवोंकूं जो विशेषकरिकै भ्रमण करावै है ताका नाम विराट है । और द्रु नाम वृक्षका है । पद नाम चिन्हका है । ता वृक्षका है ध्वजाविषे चिह्न जिसके ताका नाम द्रुपद है । यह तीनों महारथी हैं ॥ ४ ॥ और शत्रुवोंकूं भयकी प्राप्ति करणेहारेका नाम धृष्ट है । केतु नाम ध्वजाका है । भयका कारण है ध्वजा जिसकी ताका नाम धृष्टकेतु है । और चिकितान नामा राजाका जो पुत्र होवै ताका नाम चेकितान है । और काशीका जो राजा होवै ताका नाम काशिराज है । ते तीनों राजे वीर्यवान् हैं । तेजबलकरिकै युक्त शत्रुवोंकूंभी जो विविध प्रकारतैं भगाइ देवै ताका नाम वीर है । तिस वीर पुरुषका जो कर्म होवै ताका नाम वीर्य है । सो वीर्य जिसविषे वर्त्तमान होवै ताका नाम वीर्यवान् है । और पुरु नाम बहुतोंका है । तिन बहुत शूरोंकूं जो जय करे है ताका नाम पुरुजित् है । और कुंतीके पिताका नाम कुंतीभोज है । और शिबि नामा राजाके कुलविषे जो उत्पन्न होवै ताका नाम शैब्य है । ते तीनों राजे नरपुंगव हैं । सर्व नरोंविषे जो श्रेष्ठ होवै ताका नाम नरपुंगव है ॥ ५ ॥ और युधा नाम युद्धका है और मन्यु नाम क्रोधका है । युद्धविषे है क्रोधका वेग जिसका ताका नाम युधामन्यु है । यह युधामन्यु पंचाल देशका राजा है । सो युधामन्यु विक्रांत है । विशेषकरिकै जाकेविषे पराक्रम रहे हैं ताका नाम विक्रांत है । और ओजस् नाम बलका है । उत्तम है ओजस् जिसका ताका नाम उत्तमौजाः है । सो उत्तमौजाः नामा राजाभी पंचालदेशका राजा है ॥ कैसा है सो उत्तमौजाः नामा राजा वीर्यवान् है । अथवा वीर्यवान् नरपुंगव विक्रांत यह तीनोंविशेषण

युयुधानादिक सर्व राजोंके जानणे । और सुभद्राका जो पुत्र होवै ताका नाम सौभद्र है ऐसा अभिमन्यु है और द्रौपदीके जो प्रतिविंध्यादिक पंच पुत्र हैं। तिनोंका नाम द्रौपदेय है । और (द्रौपदेयाश्च) या पदविषे स्थित जो चकार है ता चकारकरिकै पूर्व उक्त राजावोंतैं भिन्न पांड्य राजा घटोत्कच आदिक सर्व राजोंका ग्रहण करणा । और युधिष्ठिरादिक पंचपांडव अत्यंत प्रसिद्ध हैं । यातैं दुर्योधननैं तिन पंचपांडवोंकी गिणती करी नहीं । अथवा (भीमार्जुनसमा युधि) या वचनकरिकै ता दुर्योधननैं युयुधानादिक सर्व शूरवीरोंविषे भीम अर्जुनकी उपमा दई है । यातैं भीमार्जुन यह पद पांचों पांडवोंका उपलक्षक है। इस प्रकार युयुधान राजातैं आदि लैके द्रौपदीके पंच पुत्रोंपर्यंत कथन करे जो सप्तदश राजे । तिनोंतैं भिन्न दूसरेभी तिनोंके संबंधी शूरवीर बहुत हैं । ते सर्व शूरवीर महारथी हैं । रथी अथवा अर्धरथी इनोंविषे कोई है नहीं । इहां (महारथाः) या शब्दकरिकै अतिरथीकाभी ग्रहण करणा । तहां महारथी, अतिरथी, रथी, अर्धरथी या चारोंका शास्त्रविषे या प्रकारका लक्षण कथन करा है । तहां श्लोक । "एको दशसहस्राणि योधयेद्यस्तु धन्विनाम् । शस्त्रशास्त्रप्रवीणश्च महारथ इति स्मृतः । अमितान्योधयेद्यस्तु संप्रोक्तोऽतिरथस्तु सः । रथस्त्वेकेन यो योद्धा तन्न्यूनोऽर्धरथः स्मृतः" । अर्थ यह । जो पुरुष एकलाही धनुष्वाले दशसहस्र शूरवीरोंके साथि युद्ध करे है तथा शस्त्रशास्त्रविषे अत्यंत कुशल होवै है ता पुरुषकूं महारथी कहे हैं । और जो पुरुष एकलाही असंख्यात शूरवीरोंके साथि युद्ध करे है तथा शस्त्रशास्त्रविषे अत्यंत कुशल होवै है ता पुरुषकूं अतिरथी कहे हैं । और जो पुरुष एक शूरवीरके साथिही युद्ध करे है ताकूं रथी कहे हैं । और जो पुरुष ता रथीतैंभी न्यून बलवाला होवै है ताकूं अर्धरथी कहे हैं इति ॥ ६ ॥ ❀ शंका । हे दुर्योधन इन पांडवोंकी सैनाविषे महान् शूरवीरोंकूं देखिकै जो कदाचित् तुमारेकूं भय होता होवै तौ इन पांडवोंके साथि शत्रुपणेका परित्याग करिकै तुम मित्रता करो या प्रकारके द्रोणाचार्यके अभिप्रायकी आशंका करिकै सो दुर्योधन ता द्रोणाचार्यके प्रति अपणी सैनाविषे स्थित शूरवीरोंके नामोंका वर्णन करे है ।

(मू. श्लो.) अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम । नायका मम सैन्यस्य संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥ ७ ॥ (पदच्छेदः)
अस्माकं । तु । विशिष्टाः । ये[३] । तान् । निबोध[६] । द्विजोत्तम । नायकाः । मम । सैन्यस्य । संज्ञार्थं । तान् । ब्रवीमि । ते[१२] ॥ ७ ॥
(पदार्थः) हे सर्व ब्राह्मणोंविषे श्रेष्ठ आचार्य हम सर्वोंके मध्यविषे जे[३] श्रेष्ठ योद्धा हैं तिनें योद्धावोंकूं आप निश्चय करो मेरी[८]
सैनाके जे प्रधान नायक हैं तिनोंविषे यत्किंचित नायकोंकूं नामतैं उच्चारण करिकै मैं तुमारे तांई कथन करताहूं ॥ ७ ॥

टीका । हे आचार्य । हमारी सैनाविषे जे योद्धा विद्या, बल, पौरुष, कुल, शील इत्यादिक गुणोंकरिकै श्रेष्ठ हैं । तथा जे योद्धा हमारी सैनाकूं तिस तिस

स्थानविषे लेजाणेहारे मुख्य नायक हैं। ते सर्व योद्धा यद्यपि असंख्यात हैं । तथापि तिन सर्व योद्धावोंविषे यत्किंचित योद्धावोंकूं नामतैं उच्चारण करिकै तिनोंतैं भिन्न सर्व योद्धावोंके लखावणेवासतै मैं आपके प्रति कथन करताहूं । ते सर्व योद्धा आपकूं पूर्वही ज्ञात हैं । यातैं किसी अज्ञात योद्धावोंके जनावणेवासतै मैं आपके प्रति तिन योद्धावोंके नाम कथन करता नहीं । किंतु पूर्वही ज्ञात योद्धावोंके स्मरण करणेवासतै मैं तिनोंके नामोंकूं कथन करताहूं । इहां (अस्माकं तु) या पदविषे स्थित जो तुशब्द है । ता तुशब्दकरिकै ता दुर्योधननैं अंतर उत्पन्न हूए भयका बाहिर नहीं प्रगट करणा या प्रकारकी अपणी ढीठता बोधन करी । और (हे द्विजोत्तम) या विशेषणके कहणेकरिकै सो दुर्योधन ता द्रोणाचार्यकी स्तुति करता हूआ अपणे युद्धरूप कार्यविषे ता द्रोणाचार्यकी प्रवृत्तिकूं संपादन करता भया । औ ता द्रोणाचार्यके द्वेषपक्षविषे तौ सो दुर्योधन (हे द्विजोत्तम) या विशेषणकरिकै यह अर्थ बोधन करता भया । तूं ब्राह्मण होणेतैं युद्धविषे कुशल हैं नहीं यातैं जो कदाचित् तूं हमारेतैं विमुख होइकै पांडवोंके पक्षविषेभी जावैगा । तौभी भीष्मादिक श्रेष्ठ क्षत्रिय हमारे पक्षविषे विद्यमान हैं । यातैं तुमारेतैं विना हमारी किंचित्मात्रभी हानि होवैगी नहीं । और (संज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते) या कहणेकरिकै ता दुर्योधननैं यह अर्थ सूचन करा । अपणे प्रिय शिष्य पांडवोंकी सैनाकूं देखिकै हर्षकरिकै व्याकुल हूआ है मन जिसका ऐसा जो तूं हैं । तिस तुमारेकूं अपणे भीष्मादिक शूर पुरुषोंकी विस्मृति मत होवै । या कारणतैं अपणी सैनाके भीष्मादिक शूरपुरुषोंकी स्मृति करावणेवासतै मैं यत्किंचित् तिन शूरवीरोंके नाम तुमारेप्रति कथन करताहूं इति ॥ ७ ॥ ❀ अब सो दुर्योधन राजा ता द्रोणाचार्यके समीप अपणी सैनाविषे स्थित शूरवीरोंकी गिणति करे है ।

(मू. श्लो.) भवान् भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिंजयः ॥ अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिर्जयद्रथः ॥८॥ (पदच्छेदः) भवान् । भीष्मः । च । कर्णः । च । कृपः । च । समितिंजयः । अश्वत्थामा । विकर्णः । च । सौमदत्तिः । जयद्रथः ॥ ८ ॥ (पदार्थः) आप द्रोणाचार्य तथा भीष्मपितामह तथा कर्ण तथा संग्रामकूं जय करणेहारा कृपाचार्य तथा अश्वत्थामा तथा विकर्ण तथा सौमदत्ति तथा जयद्रथ ॥ ८ ॥

टीका । हे आचार्य हमारी सैनाविषे प्रथम तौ आप महान् शूरवीर हो । तथा भीष्मपितामह है । तथा कर्ण है । तथा संग्रामकूं जय करणेहारा कृपाचार्य है । शंका । द्रोणाचार्यका पुत्र जो अश्वत्थामा है तिसकी कर्णतैं अनंतर गिणती करणेतैं द्रोणाचार्यकूं मनविषे क्रोध हूआ होवैगा । या प्रकार ता द्रोणाचार्यके क्रोधकी शंका करिकै ता क्रोधकी निवृत्ति करणेवासतै सो दुर्योधन यह अश्वत्थामादिक चारि तौ हमारी सैनाविषे सर्व शूरवीरोंतैं श्रेष्ठ नायक हैं या प्रकारके

अभिप्रायतैं तिन चारोंकी गिणती करे है (अश्वत्थामा इति) हे आचार्य आपका पुत्र जो अश्वत्थामा है तथा हमारा छोटा भ्राता जो विकर्ण है। तथा सोमदत्त राजाका पुत्र जो सौमदत्ति है। जाकूं भूरिश्रवा कहे हैं। तथा सिंधुदेशका राजा जो जयद्रथ है। यह चारों महान शूरवीर हैं। इहां जैसे दुर्योधननैं भीष्मादिकोंकी अपेक्षा करिकै द्रोणाचार्यकी जो प्रथम गिणती करी है। सो ता द्रोणाचार्यकी प्रसन्नता करणेवासतै करी है। तैसे विकर्णादिकोंकी अपेक्षा करिकै जो द्रोणाचार्यके पुत्र अश्वत्थामाकी प्रथम गिणती करी है। सोभी ता द्रोणाचार्यकी प्रसन्नता करणेवासतै करी है। या लोकविषे अपणी उत्कृष्टताकूं तथा अपणे पुत्रकी उत्कृष्टताकूं श्रवण करिकै सर्व लोक प्रसन्न होवै हैं। इहां (जयद्रथः) या पदके स्थानविषे किसी पुस्तकमें (तथैव च) यह पाठभी होवै है इति ॥ ८ ॥ ❁ शंका। हे दुर्योधन तुमारी सैनाविषे क्या इतनैंही शूरवीर हैं। ऐसी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए। सो दुर्योधन हमारी सैनाविषे दूसरेभी बहुत शूरवीर हैं। या प्रकारका उत्तर कथन करे है।

(मू. श्लो.) अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः। नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥९॥ (पदच्छेदः) अन्ये। च। बहवः। शूराः। मदर्थे। त्यक्तजीविताः। नानाशस्त्रप्रहरणाः। सर्वे। युद्धविशारदाः॥ ९ ॥ (पदार्थः) हे आचार्य हमारी सैनाविषे पूर्व उक्त शूरवीरोंतैं दूसरे भी बहुत शूरवीर हैं कैसे हैं ते शूरवीर मेरे जयरूप प्रयोजनवासतै अपणे जीवनेकी आशाकूंभी जिनोंनैं परित्याग करी है तथा नानाप्रकारके शस्त्र हैं युद्धके साधन जिनोंके तथा ते सर्व शूरवीर युद्धविषे बहुत कुशल हैं॥९॥

टीका। हे आचार्य केवल पूर्व उक्त भीष्मादिकही हमारी सैनाविषे नहीं हैं। किंतु तिन भीष्मादिकोंतैं भिन्न दूसरेभी शल्य, कृतवर्मा, भगदत्त इत्यादिक बहुत शूरवीर हैं। कैसे हैं ते शूरवीर। अपणे प्राणोंका परित्याग करिकैभी या दुर्योधनका जय हम संपादन करैंगे या प्रकारके निश्चय करिकै युक्त हैं। तथा शूल, चक्र, गदा, खड्ग इत्यादिक नानाप्रकारके शस्त्र हैं युद्धके साधन जिनोंके या कारणतैंही ते सर्व शूरवीर युद्धविषे बहुत कुशल हैं। इहां (शूराः) इत्यादिक विशेषणोंकरिकै ता दुर्योधननैं अपणी सैनाविषे पांडवोंकी सैनातैं बाहुल्यता कथन करी। तथा अपणेविषे ता सैनाकी अनन्य भक्ति कथन करी। तथा अपणी सैनाकी शौर्यता तथा युद्धविषे अत्यंत उद्यम तथा अत्यंत कुशलता कथन करी। ऐसी हमारी सैना इन पांडवोंकी सैनातैं अधिक बलवान है इति ॥ ९ ॥ ❁ शंका। हे दुर्योधन जैसे तुमारी सैनाविषे शस्त्रअस्त्रविद्याविषे कुशल भीष्मादिक अनेक शूरवीर हैं। तैसे पांडवोंकी सैनाविषेभी शस्त्रअ-

स्त्रविद्याविषे कुशल अनेक शूरवीर हैं । यातैं ते दोनों सैना समानही हैं । ऐसी द्रोणाचार्यकी शंकाके हूए । सो दुर्योधन राजा दूसरे प्रकारतैंभी तिन पांड-वोंकी सैनातैं अपणी सैनाविषे अधिकता वर्णन करे है ।

(मू. श्लो.) अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितं । पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितं ॥ १० ॥ (पदच्छेदः) अपर्याप्तं । तत् । अस्माकं । बलं । भीष्माभिरक्षितं । पर्याप्तं । तु । इदं । एतेषां । बलं । भीमाभिरक्षितं ॥ १० ॥ (पदार्थः) हे आचार्य हमारी सो सैना अनंत है तथा भीष्मकरिकै सर्व ओरतैं रक्षण करी है और याँ पांडवोंकी यह सैना तौ न्यून है तथा भीमकरिकै रक्षण करी है ॥१०॥

टीका । हे आचार्य यह हमारी सैना एकादश अक्षौहिणी संख्यावाली है । तथा सर्व लोकविषे प्रसिद्ध है महिमा जिसकी तथा अत्यंत सूक्ष्म है बुद्धि जिसकी ऐसा जो भीष्म है ता भीष्मकरिकै सा हमारी सैना सर्व ओरतैं रक्षण करी है । यातैं सा हमारी सैना तिन पांडवोंकी सैनातैं प्रबल है । और यह पांडवोंकी सैना तौ सप्त अक्षौहिणी संख्यावाली होणेतैं हमारी सैनातैं न्यून है । तथा अत्यंत चपलबुद्धिवाले दुर्बल भीमसेनकरिकै सर्व ओरतैं रक्षण करी हूई है । यातैं यह पांडवोंकी सैना हमारी सैनातैं अत्यंत दुर्बल है । अथवा । अपर्याप्तं तत् अस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितं पर्याप्तं तु इदं एतेषां बलं भीमाभिरक्षितं । या द-शमे श्लोकके पदोंकी या प्रकारतैं योजना करणी । सो पांडवोंकी सैना हमारे पराजय करणेवासतै समर्थ नहीं है । जिसवासतै सा पांडवोंकी सैना भीष्माभिर-क्षित है । क्या महान पराक्रमवाला तथा सूक्ष्मबुद्धिवाला जो भीष्म है । सो भीष्मपितामह हमोंनैं स्थापन करा है जिस पांडवोंकी सैनाके निवृत्त करणेवासतैं । या कारणतैं सा पांडवोंकी सैना भीष्माभिरक्षित है । और यह हमारी सैना तौ इन पांडवोंके पराजय करणेविषे समर्थ है । जिस कारणतैं यह हमारी सैना भीमाभिरक्षित है । क्या अत्यंत दुर्बल हृदय जिसका तथा अत्यंत स्थूल है बुद्धि जिसकी ऐसा सो भीमसेन है । सो भीमसेन इनोंनैं स्थापन करा है जिस हमारी सैनाके निवृत्त करणेवासतै । या कारणतैं यह हमारी सैना भीमाभिरक्षित है । यातैं ऐसी दुर्बल पांडवोंकी सैनातैं हमारेकूं किंचित्मात्रभी भय है नहीं। इहां प्रथम व्याख्यानविषे भीष्मेण अभिरक्षितं भीष्माभिरक्षितं तथा भीमेन अभिरक्षितं भीमाभिरक्षितं या तृतीयातत्पुरुषसमासकरिकै भीष्माभिरक्षितं यह दुर्यो-धनकी सैनाका विशेषण है । और भीमाभिरक्षितं यह पांडवोंकी सैनाका विशेषण है । और दूसरे व्याख्यानविषे तौ भीष्मः अभिरक्षितो यस्मै तत् भीष्माभि-रक्षितं तथा भीमः अभिरक्षितो यस्मै तत् भीमाभिरक्षितं या प्रकारके बहुव्रीहिसमासकरिकै भीष्माभिरक्षितं यह पांडवोंकी सैनाका विशेषण है । और भीमा-

भिरक्षितं यह दुर्योधनकी सैनाका विशेषण है इति ॥ १० ॥ ❀ शंका । हे दुर्योधन या पांडवोंके सैनाकी अपेक्षा करिकै अपणी सैनाकूं प्रबल जानिकै जो तूं भयतै रहित है । तौ किसवासतै तूं बहुत कल्पना करता है । ऐसी आशंकाके हूए । सो दुर्योधन राजा कहे है ।

(मू. श्लो.) अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः । भीष्ममेवाभिरक्षंतु भवंतः सर्व एव हि ॥ ११ ॥ (पदच्छेदः) अयनेषु । च । सर्वेषु । यथाभागं । अवस्थिताः । भीष्मं । एवं । अभिरक्षंतु । भवंतः । सर्वे । एव हि ॥ ११ ॥ (पदार्थः) जिस कारणतैं द्रोणाचार्यादिक तुम सर्व योद्धा व्यूहरचनायुक्त सैनाके सर्व प्रवेशमार्गोंविषे अपणे अपणे स्थानविषे स्थित हूए या भीष्मपितामहकूं ही सर्व ओरतैं रक्षण करो ॥ ११ ॥

टीका । (अयनेषु च) या पदविषे स्थित जो चकार है । सो चकार पूर्व कर्त्तव्यकी अपेक्षा करिकै कर्त्तव्यविशेषका बोधक है । युद्धके प्रारंभकालविषे योद्धा पुरुषोंके यथायोग्य युद्धभूमिविषे पूर्वउत्तरादिक दिशावोंके विभाग करिकै जो स्थितिके स्थान नियम करे जावै हैं तिन स्थानोंका नाम अयन है । और सर्व सैनाका पति तौ ता सर्व सैनाकूं अपणे आश्रित करिकै ता सर्व सैनाके मध्यविषे स्थित होवै है । सो इस हमारी सैनाका पति भीष्मपितामह है । सो भीष्मपितामह युद्धके अत्यंत अभिनिवेशतैं अपणे सन्मुखदेशकी तरफ तथा अपणे पृष्ठदेशकी तरफ तथा अपणे वामभागदक्षिणभागकी तरफ देखता नहीं । यातैं द्रोणाचार्यादिक तुम सर्व योद्धा अपणे भिन्न भिन्न रणभूमिनकूं परित्याग करिकै अपणे अपणे यथायोग्य स्थानविषे स्थित हुए या भीष्मपितामहकाही सर्व ओरतैं रक्षण करो । जिसकरिकै कोई परसैनाका शत्रु किसी मार्गद्वारा आइकै या भीष्मपितामहका हनन नहीं करै । इस प्रकार सावधान होइकै रक्षण करो । जबी तुम सर्व योद्धा या भीष्मपितामहका रक्षण करोगे । तबी ता भीष्मपितामहकी कृपातैं हम सर्वोंका रक्षण होवैगा इति ॥ ११ ॥ ❀ । शंका । हे संजय या प्रकारके वचन जबी ता दुर्योधन राजानैं कथन करे । तिसतैं अनंतर ते भीष्मादिक योद्धा क्या कार्य करते भये । या प्रकारकी ता धृतराष्ट्रकी शंकाके हुए । कोई हमारी स्तुति करो अथवा कोई हमारी निंदा करो इस दुर्योधन राजाके वासतै यह हमारा देह अवश्यकरिकै पतन होवैगा या प्रकारके अभिप्रायकरिकै सो भीष्मपितामह ता दुर्योधनके चित्तविषे हर्ष उत्पन्न करता हुआ सिंहनादकूं तथा शंखके शब्दकूं करता भया या प्रकारका उत्तर सो संजय ता धृतराष्ट्रकेप्रति कथन करे है ।

(मू. श्लो.) तस्य संजनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः । सिंहनादं विनद्योच्चैः शंखं दध्मौ प्रतापवान् ॥ १२ ॥ (पदच्छेदः) तस्य । संजनयन् । हर्षं । कुरुवृद्धः । पितामहः । सिंहनादं । विनद्य । उच्चैः । शंखं । दध्मौ । प्रतापवान् ॥ १२ ॥ (पदार्थः) हे धृतराष्ट्र महान् प्रतापवाला तथा कुरुवंशविषे वृद्ध ऐसा भीष्मपितामह तिस दुर्योधन राजाके हर्षकूं उत्पन्न करता हूआ सिंहनादकूं करिके उच्चै स्वरतें शंखकूं बजावता भया ॥ १२ ॥

टीका । हे धृतराष्ट्र । पांडवोंकी सैनाकूं देखिकरिकै उत्पन्न हूआ है भय जिसकूं । तथा ता भयकी निवृत्ति करणेवासतै कपटकरिकै ता द्रोणाचार्यके शरणकूं प्राप्त हूआ । तथा इस कालविषेभी यह दुर्योधन हमारे साथि कपट करे है या प्रकारके असंतोषतैं वाणीमात्रकरिकैभी जिसका आचार्यनैं आदर नहीं करा । तथा ता द्रोणाचार्यकी उपेक्षाकूं जानिकै (अयनेषु च सर्वेषु) इत्यादिक वचनोंकरिकै भीष्मपितामहकी स्तुति करी है जिसनैं । ऐसा जो दुर्योधन राजा है । ता दुर्योधनके भयकी निवृत्ति करणेहारा तथा ता दुर्योधन राजाके जयका सूचन करणेहारा ऐसा जो बुद्धिविषे स्थित उल्लासरूप हर्ष है ता हर्षकूं उत्पन्न करता हूआ सो भीष्मपितामह महान् सिंहनादकूं करिकै ऊच्चै स्वरतैं शंखकूं बजावता भया । इहां संजयनैं भीष्मके कुरुवृद्ध, पितामह, प्रतापवान् यह तीन विशेषण दीये हैं । तहां (कुरुवृद्धः) या प्रथम विशेषणकरिकै तौ ता भीष्मविषे द्रोणाचार्यके तथा दुर्योधन राजाके अभिप्रायका ज्ञान सूचन करा । जिसवासतै लोकविषे वृद्ध पुरुषोंविषेही पुत्रादिकोंके अभिप्रायका ज्ञान होवै है । और (पितामहः) या द्वितीय विशेषणकरिकै जैसे द्रोणाचार्यनैं या दुर्योधनादिकोंकी उपेक्षा करी है । तैसे हमारेकूं इनोंकी उपेक्षा करणी योग्य नहीं है या प्रकारका अभिप्राय सूचन करा । और तीसरे (प्रतापवान्) या विशेषणकरिकै यह अर्थ सूचन करा । ऊच्चै स्वरतैं सिंहनादपूर्वक जो भीष्मनैं शंखकूं बजाया है । सो भीष्मके शंखका शब्द पांडवोंके सैनाकूं अवश्यकरिकै भयकी प्राप्ति करैगा इति ॥ १२ ॥ ❀ अब ता सैनापति भीष्मकी प्रवृत्तितैं अनंतर जिस प्रकार सर्व योद्धावोंकी प्रवृत्ति होती भई ताकूं संजय निरूपण करे है ।

(मू. श्लो.) ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः । सहसैवाभ्यहन्यंत स शब्दस्तुमुलोभवत् ॥ १३ ॥ (पदच्छेदः) ततः । शंखाः । च । भेर्यः । च । पणवानकगोमुखाः । सहसा । एव । अभ्यहन्यंत । सः । शब्दः । तुमुलः । अभवत् ॥ १३ ॥ (पदार्थः) हे

धृतराष्ट्र तो सैनापति भीष्मकी प्रवृत्तितैं अनंतर ता दुर्योधनकी सैनाविषे अनेक शंख तथा अनेक भेरी तथा अनेक पणव तथा अनेक अनक तथा अनेक गोमुख शीघ्र ही बजते भये सो शंखादिकोंका शब्द महान् होता भया ॥ १३ ॥ ॥

टीका । हे धृतराष्ट्र ता सैनापति भीष्मके शंखके शब्दकूं श्रवण करिकै उत्पन्न हूआ है युद्ध करणेका उत्साह जिनोंविषे ऐसे जो द्रोणाचार्यादिक योद्धा हैं । ते सर्व योद्धा अपणे अपणे शंखोंकूं शीघ्रही बजावते भये । तथा दूसरे सैनाचर पुरुष भेरी, पणव, अनक, गोमुख इत्यादिक वादित्रोंकूं शीघ्रही बजावते भये । तिन शंख भेरी आदिकोंका सो ध्वनिरूप शब्द महान् होता भया । ता महान् शब्दकूं श्रवणकरिकैभी तिन पांडवोंकूं किंचित्मात्रभी क्षोभ नहीं होता भया । इहां पणव नाम मृदंगका है । अनक नाम नगारेका है । गोमुख नाम रणसिंहाका है इति ॥१३॥ ❀ ॥ इस प्रकार दुर्योधन राजाकी सैनाके प्रवृत्तिकूं कथन करिकै अब पांडवोंकी सैनाके प्रवृत्तिकूं सो संजय कथन करे है ।

(मू. श्लो.) ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यंदने स्थितौ । माधवः पांडवश्चैव दिव्यौ शंखौ प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥ (पदच्छेदः) ततः । श्वेतैः । हयैः । युक्ते । महति । स्यंदने । स्थितौ । माधवः । पांडवः । च । एव । दिव्यौ । शंखौ । प्रदध्मतुः ॥ १४ ॥ (पदार्थः) हे धृतराष्ट्र भीष्मादिकोंके शंखादिकोंके शब्द श्रवणतैं अनंतर श्वेतवर्णवाले अश्वोंकरिकै युक्त तथा महान् ऐसे रथविषे स्थित जो श्रीकृष्णभगवान् है तथा अर्जुन है ते दोनों दिव्य शंखोंकूं बजावते भये ॥ १४ ॥ ॥ ॥

टीका । या श्लोकके अक्षरोंका अर्थ स्पष्टही है । ताका भावार्थ यह है । यद्यपि पांडवोंकी सैनाविषे अर्जुनकी न्यांई तथा भगवान्की न्यांई दूसरेभी सर्व योद्धा अपणे अपणे रथोंविषेही स्थित थे । यातैं केवल अर्जुनका तथा कृष्णभगवान्काही रथस्थत्वरूपविशेषण संभवै नहीं । तथापि (ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते) इत्यादिक विशेषणयुक्त रथविषे जो अर्जुनकी तथा भगवान्की स्थिति कथन करी है । सो दूसरे रथोंतैं ता अर्जुनके रथकी उत्कृष्टता बोधन करणेवास्तै कथन करी है । यातैं अग्नि देवतानैं अर्जुनके तांई दीया जो रथ है । सो रथ किसीभी शत्रुकरिकै चलायमान होइ सकै नहीं । ऐसे महान् रथविषे स्थित जो अर्जुन तथा कृष्ण भगवान् है । ते दोनों किसीभी शत्रुकरिकै जीते जावै नहीं इति ॥ १४ ॥ ❀ ॥ अब सो अर्जुन तथा श्रीभगवान् जिन शंखोंकूं बजावते भये हैं तिन शंखोंके नाम तथा भीमादिकोंके शंखोंके नाम दो श्लोकोंकरिकै वर्णन करे है ।

(मू. श्लो.) पांचजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनंजयः। पौंड्रं दध्मौ महाशंखं भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥ (पदच्छेदः) पांचजन्यं। हृषीकेशः। देवदत्तं। धनंजयः। पौंड्रं। दध्मौ। महाशंखं। भीमकर्मा वृकोदरः ॥ १५ ॥ (पदार्थः) श्रीकृष्णभगवान् पांचजन्य नामा शंखकूं बजावता भया तथा अर्जुन देवदत्त नामा शंखकूं बजावता भया और लोकोंकूं भयकी प्राप्ति करणेहारे हैं कर्म जिसके तथा वृककी न्यांई है उदर जिसका ऐसा भीमसेन पौंड्र नामा महाशंखकूं बजावता भया ॥ १५ ॥

टीका। पंचजनोंतैं जो उत्पन्न होवै ताकूं पांचजन्य कहे हैं। ता पांचजन्य नामा शंखकूं हृषीकेश बजावता भया। और देवतावोंनैं दीया हुआ जो शंख है ताका नाम देवदत्त है। ता देवदत्त नामा शंखकूं धनंजय बजावता भया। इहां संजयनैं श्रीकृष्णभगवान्कूं जो हृषीकेश नाम करिकै कथन करा है। ताका यह अभिप्राय है। हृषीकेश या नामविषे हृषीक और ईश यह दो पद हैं। तहां हृषीक नाम इंद्रियोंका है। ईश नाम प्रेरकका है। ते दोनों पद मिलिकै सर्व इंद्रियोंकूं अपणे अपणे कार्यविषे प्रवृत्त करणेहारे अंतर्यामी ईश्वरकूं कथन करे हैं। ऐसा सर्वका अंतर्यामी कृष्णभगवान् जिन पांडवोंकी सहायताविषे है। तिन पांडवोंकूं तुमारे दुर्योधनादिक पुत्र जय करि सकैंगे नहीं और ता संजयनैं अर्जुनकूं जो धनंजय नामकरिकै कथन करा है। ताका यह अभिप्राय है। सर्व दिशावोंके जयकालविषे सर्व राजावोंकूं जीतिकरिकै अर्जुन धनकूं लेआवता भया है। या कारणतैं ता अर्जुनकूं धनंजय कहे हैं। ऐसा महान् पराक्रमवाला अर्जुन तुमारे पुत्रोंतैं जीत्या जावैगा नहीं। और ता संजयनैं भीमसेनका जो वृकोदर यह विशेषण दीया है। ताका यह अभिप्राय है। वृककी न्यांई ता भीमसेनविषे बहुत अन्नके पचावणेकी सामर्थ्य है। यातैं सो भीमसेन अत्यंत बलवान् है इति ॥ १५ ॥

(मू. श्लो.) अनंतविजयं राजा कुंतीपुत्रो युधिष्ठिरः। नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥ (पदच्छेदः) अनंतविजयं। राजा। कुंतीपुत्रः। युधिष्ठिरः। नकुलः। सहदेवः। च। सुघोषमणिपुष्पकौ ॥ १६ ॥ (पदार्थः) कुंतीका पुत्र राजा युधिष्ठिर अनंतविजय नामा शंखकूं बजावता भया और नकुल तथा सहदेव यह दोनों यथाक्रमतैं सुघोष और मणिपुष्पक या दोनों शंखोंकूं बजावते भये ॥ १६ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

टीका। नाशतैं रहित विजय प्राप्त होवै जिसतैं ताका नाम अनंतविजय है। ऐसे अनंतविजय नामा शंखकूं कुंतीका पुत्र राजा युधिष्ठिर बजावता भया।

इहां कुंतीमातानैं महान् तप करिकै धर्मराजाका आराधन करा था । ता धर्मराजातैं कुंतीकूं युधिष्ठिर पुत्रकी प्राप्ति भईथी । यातैं यह युधिष्ठिर राजा महाबलवान् है । या प्रकार ता युधिष्ठिरके प्रभावका बोधन करणेवासतैं संजयनैं ता युधिष्ठिरका कुंतीपुत्र यह विशेषण दीया है । और सो युधिष्ठिर राजसूययज्ञका कर्ता है । यातैं राजाशब्दकी मुख्य अर्थता इस युधिष्ठिरविषेही घटे है । या प्रकारके अर्थका बोधन करणेवासतै संजयनैं ता युधिष्ठिरका राजा यह विशेषण दीया है । और युद्धविषे जयरूप फलका भागी हुआ जो स्थित होवै ताकूं युधिष्ठिर कहे हैं । ता युधिष्ठिरपदकरिकै संजयनैं यह अर्थ सूचन करा । या संग्रामविषे जयरूप फलका भागी हुआ यह युधिष्ठिरही स्थित होवैगा । ताके प्रतिपक्षी दुर्योधनादिक ता जयरूप फलके भागी हुए या संग्रामविषे स्थित होवैंगे नहीं इति । इहां दो श्लोकोंकरिकै पांचजन्य, देवदत्त, पौंड्र, अनंतविजय, सुघोष, मणिपुष्पक यह षट् शंखोंके नाम कथन करै । ता करिकै संजयनैं यह अर्थ बोधन करा । या पांडवोंकी सैनाविषे अपणे अपणे नामोंकरिकै प्रसिद्ध इतनै शंख हैं । और दुर्योधन राजाकी सैनाविषे तौ अपणे नामकरिकै प्रसिद्ध एकभी शंख नहीं है । यातैं यह पांडवोंकी सैना तुमारे दुर्योधनादिक पुत्रोंकी सैनातैं अत्यंत प्रबल है इति ॥ १६ ॥ ❀ ॥ अब धृतराष्ट्रकूं जो अपणे पुत्रोंके जयकी आशा है । ता आशाके निवृत्त करणेवासतै सो संजय ता पांडवोंके पक्षविषे वर्त्तमान दूसरे राजावोंकी एकसंमतिकूं दो श्लोकोंकरिकै कथन करे है ।

(मू. श्लो.) काश्यश्च परमेष्वासः शिखंडी च महारथः ॥ धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥ १७ ॥ द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते ॥ सौभद्रश्च महाबाहुः शंखान् दध्मुः पृथक् पृथक् ॥ १८॥ (पदच्छेदः) काश्यः । च । परमेष्वासः । शिखंडी । च । महारथः । धृष्टद्युम्नः । विराटः । च । सात्यकिः । च । अपराजितः । ॥ १७ ॥ द्रुपदः । द्रौपदेयाः । सर्वशः । च । पृथिवीपते । सौभद्रः । च । महाबाहुः । शंखान् । दध्मुः । पृथक् पृथक् ॥ १८ ॥ (पदार्थः) हे पृथिवीका पति धृतराष्ट्र महान् धनुषवाला जो काशीका राजा है तथा महारथी जो शिखंडी है तथा धृष्टद्युम्न जो है तथा विराट राजा जो है तथा शत्रुवोंकरिकै नहीं जीत्या हुआ जो सात्यकि राजा है॥ १७॥ तथा द्रुपद राजा जो है तथा द्रौपदीके जो पंच पुत्र हैं तथा महान् बाहुवाला जो सुभद्राका पुत्र है यह सर्व योद्धा भिन्न भिन्न अपणे अपणे शंखोंकूं बजावते भये ॥ १८ ॥ ॥ ॥

टीका । हे धृतराष्ट्र श्रीकृष्णभगवान्सहित अर्जुनादिक पंच पांडवोंकी प्रवृत्तिकूं देखिकरिकै तिन पांडवोंके पक्षपाति काशीराजा तथा शिखंडी तथा धृष्टद्युम्न तथा विराट राजा तथा सात्यकि राजा तथा द्रुपदराजा तथा द्रौपदीके प्रतिविंध्यादिक पंच पुत्र तथा सुभद्राका पुत्र अभिमन्यु यह सर्व योद्धा भिन्न भिन्न अपणे अपणे शंखोंकूं बजावते भये। इहां मुखविषे स्थित श्मश्रुरूप वालोंतैं रहितपणेका नाम शिखंड है। सो शिखंड जिसविषे होवै ताका नाम शिखंडी है । सो शिखंडी पंचाल देशका राजा है। और धृष्टद्युम्न या नामविषे धृष्ट और द्युम्न यह दो पद हैं। तहां शत्रुवोंकूं पीडा करणेहारेका नाम धृष्ट है। द्युम्न नाम बलका है । शत्रुवोंकूं पीडा करणेहारा है बल जिसका ताकूं धृष्टद्युम्न कहे हैं । और सत्यक नामा राजाका जो पुत्र होवै ताका नाम सात्यकि है । और जानुपर्यंत जिसकी बाहु विशाल होवैं ताकूं महाबाहु कहे हैं । तहां (परमेष्वासः) यह विशेषण काशीराजाका है । और (महारथः) यह विशेषण शिखंडी राजाका है । और (अपराजितः) यह विशेषण सात्यकि राजाका है । और (महाबाहुः) यह विशेषण सुभद्राके पुत्रका है । अथवा परमेष्वासः महारथः अपराजितः महाबाहुः यह चारों विशेषण काशीराजातैं आदि लैके सर्व राजावोंके जानणे इति॥ १८ ॥ ❀ ॥ता अर्जुनादिक पांडवोंके शंखोंके शब्दकूं श्रवण करिकै तिन दुर्योधनादिकोंकी किस प्रकारकी स्थिति होती भई या प्रकारकी धृतराष्ट्रकी शंकाके हुए संजय कहे है ।

(मू. श्लो.) स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् । नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥ (पदच्छेदः) सः । घोषः । धार्तराष्ट्राणां हृदयानि । व्यदारयत् । नभः । च । पृथिवीं । च । एव । तुमुलः । व्यनुनादयन् ॥ १९ ॥ (पदार्थः) सो महान् शंखोंका शब्द आकाशकूं तथा पृथिवीकूं अपणे प्रतिध्वनिरूप शब्दकरिकै पूर्ण करता हुआ धृतराष्ट्रके पुत्रपौत्रादिक संबंधीयोंके हृदयोंकूं विदारण करता भया ॥ १९ ॥ ॥ ॥ ॥

टीका । हे धृतराष्ट्र तुमारे दुर्योधनादिकोंकी सैनाविषेभी सो शंखादिकोंका शब्द यद्यपि महान् होता भया । तथापि सो शंखादिकोंका शब्द तिन पांडवोंकूं किंचित्मात्रभी क्षोभकी प्राप्ति नहीं करता भया । और पांडवोंकी सैनाविषे स्थित जो पांचजन्य, देवदत्त, पौंड्र इत्यादिक शंख हैं । तिन शंखोंके बजावणेतैं उत्पन्न भया जो ध्वनिरूप शब्द है । सो ध्वनिरूप महान् शब्द अपणी प्रतिध्वनिरूप शब्दकरिकै आकाशकूं तथा पृथिवीकूं तथा पूर्वादिक दिशावोंकूं तथा पर्वतकी गुहावोंकूं पूर्ण करता हुआ तुमारे संबंधी दुर्योधनादिकोंके तथा सैनापति भीष्मादिकोंके हृदयोंकूं भेदन करता भया । तात्पर्य

यह । जैसे शस्त्रकरिकै हृदयदेशके भेदन कीयेतैं पीडा होवै है । तिसी प्रकारकी पीडाकूं सो शब्द उत्पन्न करता भया । इहां (पृथिवीं चैव) या मूलश्लोकके पदविषे स्थित जो चकार है । ता चकारकरिकै पूर्वादिक सर्व दिशावोंका तथा पर्वतकी गुहावोंका ग्रहण करा है । (एव) यह शब्द श्लोकके पादपूर्णतावासतै है इति ॥ १९ ॥ ❀ ॥पूर्वश्लोकविषे धृतराष्ट्रके पुत्रपौत्रादिक संबंधीयोंविषे भयकी प्राप्ति कथन करी । अब पांडवोंविषे तिन दुर्योधनादिकोंतैं विपरीत निर्भयताका निरूपण करे है ।

(मू. श्लो.) अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्त्तराष्ट्रान् कपिध्वजः । प्रवृत्ते शस्त्रसंपाते धनुरुद्यम्य पांडवः ॥ २० ॥ हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ॥ (पदच्छेदः)॥ अथ । व्यवस्थितान् । दृष्ट्वा । धार्त्तराष्ट्रान् । कपिध्वजः । प्रवृत्ते । शस्त्रसंपाते । धनुः । उद्यम्य । पांडवः ॥ २० ॥ हृषीकेशं । तदा । वाक्यं । इदं । आह । महीपते । (पदार्थः) हे पृथिवीके पति धृतराष्ट्र ता भयकी उत्पत्तितैं अनंतरभी युद्धके उद्यमकरिकै स्थित धृतराष्ट्रके संबंधीयोंकूं देखिकरिकै तिस कालविषे शस्त्रप्रहारके प्रवर्त्तमान हुए कपिध्वज अर्जुन गांडीव नामा धनुषकूं हाथविषे उठाइके श्रीकृष्णभगवान्के प्रति यह वक्ष्यमाण वचन कहता भया॥ २० ॥

टीका । हे धृतराष्ट्र पांडवोंके शंखोंके महान् शब्दोंकूं श्रवण करिकै तुमारे दुर्योधनादिकोंके चित्तविषे उत्पन्न भया जो भय है । ता भयकरिकै यद्यपि तिन दुर्योधनादिकोंकूं ता युद्धतैं भागणाही प्राप्त भया था । तथापि ते दुर्योधनादिक अपणे ढीठ स्वभावतैं ता युद्धतैं नहीं भागते भये। उलटा युद्धके उद्यमकरिकै युक्त हुए ता रणभूमिविषेही स्थित होते भये । ऐसे दुर्योधनादिकोंकूं नेत्रोंसैं देखिकरिकै ता कालविषे सो कपिध्वज अर्जुन युद्ध करणेवासतै गांडीव नामा धनुषकूं अपणे हस्तविषे उठाइके अपणे सारथी हृषीकेशभगवान्के प्रति या प्रकारका वचन कहता भया । इहां सर्व लोकविषे प्रसिद्ध है पराक्रम जिसका ऐसा जो हनुमान् है ताकूं कपि कहे हैं । सो हनुमान् कपि है ध्वजाविषे जिसके ताकूं कपिध्वज कहे हैं । ता कपिध्वज विशेषणके कहणेकरिकै संजयनैं यह अर्थ बोधन करा। जिस हनुमान्की सहायताकरिकै श्रीरामचंद्रनैं रावणादिक सर्व असुरोंकूं हनन करा है। ऐसा हनुमान् जिस अर्जुनकी ध्वजाविषे स्थित है । तिस अर्जुनकूं किसीभी योद्धातैं भय होवैगा नहीं और नेत्रादिक सर्व इंद्रियोंका प्रवर्तक होणेतैं सर्व अंतःकरणकी वृत्तियोंका जो ज्ञाता होवै ताकूं हृषीकेश कहे हैं । ऐसे अंतर्यामी श्रीकृष्णभगवान्केप्रति सो अर्जुन या प्रकारका वचन कहता

भया । ता कृष्णभगवान्की संमतितैं विना सो अर्जुन तिस कालविषे स्वतंत्र होइकै किंचित्मात्रभी कार्यकूं नहीं करता भया । इहां (हे महीपते) या संबोधनकरिकै संजयनैं धृतराष्ट्रके प्रति यह अर्थ सूचन करा । यह अर्जुनादिक पांडव जिस कार्यका आरंभ करते हैं । सो प्रथम विचार करिकैही करते हैं । विचारतैं विना किसी कार्यविषेभी प्रवृत्त होते नहीं । यातैं यह पांडव राजनीतिविषे तथा धर्मविषे अत्यंत कुशल हैं । और तुमोंनैं जो इन पांडवोंका राज्य लीया है । सो विचार कीयेतैं विनाही लीया है । यातैं तुमारेविषे राजनीति तथा धर्म दोनों नहीं हैं । यातैं तुमारा कदाचित्भी जय होणेहारा नहीं है । किंतु नीतिधर्मवाले इन पांडवोंकाही जय होवैगा इति ॥ २० ॥ ❀ ॥ अब अढाई श्लोककरिकै ता अर्जुनके वचनका निरूपण करे हैं ।

(मू० श्लो०) अर्जुन उवाच ॥ सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥ २१ ॥ (पदच्छेदः) सेनयोः । उभयोः । मध्ये । रथं । स्थापय । मे । अच्युत ॥ २१ ॥ (पदार्थः) हे अच्युत दोनों सैनावोंके मध्यभागविषे मेरे रथकूं स्थापन करो ॥ २१ ॥ ॥

टीका । हे श्रीकृष्णभगवान् यह जो हमारी सैना है । तथा हमारे प्रतिपक्षी दुर्योधनादिकोंकी जो यह सैना है । तिन दोनों सैनावोंके मध्यदेशविषे या हमारे रथकूं आप स्थित करो । या प्रकारकी आज्ञा सो अर्जुन श्रीभगवान्केप्रति करता भया । इतनैं कहणेकरिकै यह अर्थ सूचन करा । परमेश्वरके जो अनन्य भक्त हैं । तिन भक्तोंकूं या लोकविषे कोईभी कार्य दुर्घट नहीं है । जिस कारणतैं साक्षात् परमेश्वरभी तिन भक्तोंकी आज्ञाकूं अंगीकार करे है । यातैं इन पांडवोंका निश्चयकरिकै जय होवैगा इति ॥ शंका ॥ हे अर्जुन, या दोनों सैनावोंके मध्यविषे जो मैं तुमारे रथकूं स्थापन करौंगा । तौ यह दुर्योधनादिक शत्रु हमारेकूं रथतैं नीचै गिडाइ देवैंगे । या प्रकारकी श्रीकृष्णभगवान्की शंकाके हुए । अर्जुन कहे है (अच्युत इति) हे भगवन् सर्व देशविषे तथा सर्व कालविषे तथा सर्व वस्तुविषे जो नाशकूं नहीं प्राप्त होवै है ताकूं अच्युत कहे हैं । ऐसे अच्युत आप हो । ऐसे आपकूं कौन पुरुष नीचै गिडावनेमैं समर्थ है । किंतु ऐसा कोईभी पुरुष समर्थ नहीं है । इहां (हे अच्युत) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं श्रीकृष्णभगवान्विषे । निर्विकारता बोधन करी । और निर्विकारविषे क्रोधादिक विकार संभवै नहीं । यातैं मेरे रथकूं आप स्थापन करो या प्रकारकी आज्ञा करणेकरिकै श्रीभगवान्विषे संभावना करा जो अर्जुनऊपरि क्रोध है ता क्रोधकूंभी अच्युत या संबोधनकरिकै अर्जुननैं निवृत्त करा इति॥ २१ ॥ ❀ ॥ शंका । हे अर्जुन या दोनों सैनावोंके मध्यविषे तौ मैं तुमारे रथकूं ले जाताहूं । परंतु तहां रथके ले जाणेकरिकै तुमारा कौन प्रयोजन सिद्ध होवैगा । सो अपणा प्रयोजन तूं हमारेप्रति कथन कर ।

जिस वासतै प्रयोजनतैं विना मंद पुरुषोंकीभी प्रवृत्ति होवै नहीं । तौ बुद्धिमान् पुरुषोंकी प्रयोजनतैं विना किस प्रकार प्रवृत्ति होवैगी । किंतु नहीं होवैगी । ऐसी श्रीकृष्णभगवान्‌की शंकाके हुए । अर्जुन ताका प्रयोजन कथन करे है ।

(मू. श्लो.) यावदेतान्निरीक्षेहं योद्धुकामानवस्थितान् । कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥ (पदच्छेदः) यावत् । एतान् । निरीक्षे । अहं । योद्धुकामान् । अवस्थितान् । कैः । मया । सह । योद्धव्यं । अस्मिन् । रणसमुद्यमे ॥ २२ ॥ (पदार्थः) हे भगवन् जितनै देशविषे स्थित होइकै मैं अर्जुन युद्धकी कामनावाले तथा रणभूमिविषे स्थित इन भीष्मादिक योद्धावोंकूं भली प्रकार देखौं तितनै देशविषे हमारे रथकूं ले जाइकै स्थित करो ॥ इस युद्धरूप व्यापारविषे मैं नें किनोंके साथि युद्ध करणा योग्य है ॥ २२ ॥

टीका । हे भगवन् हमारे साथि युद्ध करणेकी है कामना जिनोंकूं ऐसे जो युद्धभूमिविषे स्थित यह भीष्मद्रोणादिक वीर पुरुष हैं । तिन भीष्मद्रोणादिक सर्व योद्धावोंकूं जितनै देशविषे जाइकै मैं देखणेविषे समर्थ होवौं । तितनै देशविषे या हमारे रथकूं आप स्थित करो । अथवा (यावत्) यह पद कालका वाचक है । क्या जितनै कालपर्यंत इन भीष्मादिक सर्व योद्धावोंकूं मैं भली प्रकारसैं देखौं । तितनै कालपर्यंत या हमारे रथकूं दोनों सैनावोंके मध्यविषे आप स्थित करो इति । इहां (योद्धुकामान्) या विशेषणकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । यह भीष्मद्रोणादिक केवल युद्धकीही कामनावाले हैं । यातैं हमारे साथि कदाचित्‌भी यह मित्रभाव करैंगे नहीं । और (अवस्थितान्) या विशेषणकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । हमारे भयकरिकै यह भीष्मद्रोणादिक या रणभूमितैं कदाचित्‌भी चलायमान नहीं होवैंगे इति । शंका । हे अर्जुन तूं तौ युद्धके करणेहारा है । कोई युद्धके देखणेहारा तूं नहीं है । यातैं भीष्मद्रोणादिक योद्धावोंके देखणेकरिकै तुमारा कौन प्रयोजन सिद्ध होवैगा । ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए । सो अर्जुन तिनोंके देखणेका प्रयोजन कथन करे है । (कैर्मयासह योद्धव्यं इति) इहां (सह) या पदका (कैः मया) या दोनों पदोंके साथि संबंध संभवै है । ताकरिकै यह अर्थ सिद्ध होवै है । बांधवोंकाही परस्पर युद्धका उद्यम हुआ है जिसविषे ऐसी जो यह रणभूमि है । तिसविषे स्थित जो यह हमारे प्रतिपक्षी भीष्मद्रोणादिक हैं । तिनोंविषे किस योद्धाके साथि हमारेकूं युद्ध करणा योग्य है । तथा तिन भीष्मद्रोणादिक सर्व

योद्धावोंविषे किस योद्धाकूं हमारे साथि युद्ध करणा योग्य है । या प्रकारका एक महान् कौतुक है । ता कौतुकका ज्ञानही या दोनों सैनावोंके मध्यविषे रथ स्थित करणेका प्रयोजन है इति ॥ २२ ॥ ⊛ ॥ शंका । हे अर्जुन यह भीष्मद्रोणादिक बांधवही युद्धके संकल्पका परित्याग करिकै तुम दोनोंका परस्पर मित्रभाव करावैंगे । तूं युद्धका संकल्प किसवासतै करता है । ऐसी श्रीकृष्णभगवान्की शंकाके हुए सो अर्जुन कहे है ।

(मू. श्लो.) योत्स्यमानानवेक्षेहं य एतेऽत्र समागताः । धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥ २३ ॥ (पदच्छेदः) योत्स्यमानान् । अवेक्षे । अहं । ये । एते । अत्र । समागताः । धार्तराष्ट्रस्य । दुर्बुद्धेः । युद्धे । प्रियचिकीर्षवः ॥ २३ ॥ (पदार्थः) दुर्बुद्धिवाले धृतराष्ट्रके पुत्र दुर्योधनके युद्धविषे प्रियकी इच्छा करते हुए जे यहँ भीष्मद्रोणादिक याँ कुरुक्षेत्रभूमिविषे प्राप्त हुए हैं तिनं युद्धकी कामनावाले भीष्मद्रोणादिक योद्धावोंकूं मैं अर्जुन भली प्रकार देखौं ॥ २३ ॥

टीका । हे भगवन् अपणी रक्षा करणेहारे उपायका अज्ञानरूप जो दुर्बुद्धि है । ता दुर्बुद्धिकरिकै युक्त जो यह धृतराष्ट्रका पुत्र दुर्योधन है । ता दुर्योधनके केवल युद्धकरिकैही प्रियकी इच्छा करते हुए जो यह भीष्मद्रोणादिक योद्धा या धर्मक्षेत्ररूप कुरुक्षेत्रविषे प्राप्त हुए हैं । तिन युद्धकी इच्छावान् भीष्मद्रोणादिकोंकूं जैसे मैं भली प्रकारतैं देखौं । तैसे मेरे रथकूं आप स्थित करो । इहां (युद्धे प्रियचिकीर्षवः) या विशेषणके कहणेकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । यह भीष्मद्रोणादिक वृद्ध पुरुषभी केवल युद्धकरिकैही या दुर्योधनके हितकी इच्छा करते हैं । ता दुर्योधनके दुर्बुद्धि आदिकोंकी निवृत्ति करिकै या दुर्योधनके हितकी इच्छा करते नहीं । ऐसे भीष्मद्रोणादिकोंनैं हम दोनोंकी मित्रता क्या करावणी है इति । और (योत्स्यमानान्) या विशेषणके कहणेकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । या भीष्मद्रोणादिकोंकूं केवल हमारे साथि युद्ध करणेकीही इच्छा है । कोई हमारे साथि मित्रभाव करणेकी इनोंकूं इच्छा है नहीं । यातैं इनोंके साथि युद्ध करणेवासतै हमारेकूं प्रथम इनोंका देखणा उचित है इति ॥ २३ ॥ ⊛ ॥ शंका । इस प्रकार अर्जुनकरिकै प्रेरणा करा हुआ सो श्रीकृष्णभगवान् अहिंसारूप परम धर्मकूं आश्रयण करिकै ता अर्जुनकूं अवश्यकरिकै ता युद्धतैं निवृत्त करैगा । या प्रकारके धृतराष्ट्रके अभिप्रायकी शंका करिकै । ता शंकाके निवृत्त करणेकी इच्छावान् सो संजय ता धृतराष्ट्रके प्रति या प्रकारका वचन कहता भया । या प्रकारका वचन वैशंपायन जनमेजयके प्रति कथन करे है ।

(मू. श्लो.) संजय उवाच ॥ एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत । सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमं ॥ २४ ॥ भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षितां । उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान्कुरूनिति ॥ २५ ॥ (पदच्छेदः) एवं । उक्तः । हृषीकेशः । गुडाकेशेन । भारत । सेनयोः । उभयोः । मध्ये । स्थापयित्वा । रथोत्तमं ॥२४॥ भीष्मद्रोणप्रमुखतः । सर्वेषां च । महीक्षितां । उवाच । पार्थ । पश्य । एतान् । समवेतान् । कुरून् । इति ॥ २५ ॥ (पदार्थः) हे धृतराष्ट्र इस प्रकार गुडाकेश अर्जुनकरिकै कह्या हुआ हृषीकेश भगवान् दोनों सैनावोंके मध्यदेशविषे भीष्मद्रोण दोनोंके सन्मुख तथा सर्व राजावोंके सन्मुख ता उत्तम रथकूं स्थापन करिकै हे पार्थ इन एकठे हुए कौरवोंकूं तूं देख यां प्रकारका वचन कहता भया ॥ २४ ॥ २५ ॥

टीका । हे (भारत) यह धृतराष्ट्रका संबोधन है । ता संबोधनकरिकै संजयनैं यह अर्थ सूचन करा । तुमारी भरतराजाके वंशविषे उत्पत्ति हुई है । ता अपणे भरतवंशकी मर्यादाकूं विचार करिकैभी तुमारेकूं अपणे संबंधियोंका द्रोह परित्याग करणेयोग्य है इति । इहां अर्जुनकूं गुडाकेश नामकरिकै कथन करा । ता गुडाकेश शब्दका यह अर्थ है । गुडाकायाः ईशः गुडाकेशः । अर्थ यह । गुडाका नाम निद्राका है ता निद्राका जो ईश होवै क्या जिसनैं निद्राकूं अपणे वशवर्ती करी होवै ताका नाम गुडाकेश है इति । अथवा गुडावत् केशाः यस्य स गुडाकेशः । अर्थ यह । "अंगुष्ठतर्जनीयोगो गुडा नाम्नी तु मुद्रिका"। या शास्त्रके वचनतैं हस्तके अंगुष्ठका जो तर्जनी अंगुलीके साथि संबंध है ताका नाम गुडामुद्रिका है । ता गुडामुद्रिकाके परिमाण हैं अग्र केश जिसके ताका नाम गुडाकेश है । इति । अथवा गुडं अकति व्याप्नोतीति गुडाकः शिवः स शिवः ईशो यस्य स गुडाकेशः । अर्थ यह । "गुडो गोलेक्षुपाकयोः" या कोशके वचनतैं गुडशब्द गोलका वाचक है । तथा लोकप्रसिद्ध गुडका वाचक है । तहां जैसे अग्निकरिकै तप्ये हुए लोहपिंडकूं सो अग्नि अंतरबाहिर व्यापक करिकै रहे है । तैसे या ब्रह्मांडरूप गोलकूं अंतरबाहिर व्याप्त करिकै जो स्थित होवै ताका नाम गुडाक है । ऐसा शिवभगवान् है । तहां श्रुतिः ॥ "विश्वस्यैकं परिवेष्टितारं ज्ञात्वा शिवं" ॥ अर्थ यह । सर्व विश्वकूं व्याप्त करणेहारा जो एक शिव है । ता शिवकूं अपणा आत्मारूप जानिकै यह पुरुष मोक्षकूं प्राप्त होवै है । ऐसा गुडाक नामा शिव है ईश जिसका ताका नाम गुडाकेश है इति । अथवा गुडवन्मधुरस्सन् भक्तान् अकति प्राप्नोतीति गुडाकः शिवः । स शिवः ईशो यस्य स गुडाकेशः ॥ अर्थ यह । जैसे यह लोकप्रसिद्ध गुड मधुर होवै है । तैसे मधुर हुआ

जो भक्तजनोंकूं प्राप्त होवै । ताका नाम गुडाक है । ऐसा शिवभगवान् है । तहां श्रुतिः । "स्वादुष्किलायंमधुमानुतायं इति" ऐसा शिवभगवान् है ईश जिसका ताका नाम गुडाकेश है इति । और हृषीक नाम इंद्रियोंका है । तिन सर्व इंद्रियोंकूं जो अपणे अपणे कार्यविषे प्रवृत्त करै ताका नाम हृषीकेश है । ऐसे हृषीकेशभगवान्के प्रति जबी ता गुडाकेश अर्जुननैं दोनों सैनाके मध्यविषे रथके स्थापन करणेकी आज्ञा करी । तबी सो कृष्णभगवान् यह अर्जुन हमारा भृत्य होइकै मैं स्वामीकूं नीचकर्मरूप सारथीपणेविषे प्रेरणा करता है या प्रकारका दोष आरोपण करिकै ता अर्जुनऊपरि क्रोध नहीं करता भया । जिस वासतै सो कृष्णभगवान् सर्वदा भक्तजनोंके अधीन रहे है । तथा ता अर्जुनकूं युद्धतैं निवृत्तभी नहीं करता भया । किंतु ता अर्जुनके वचनकूं मानिके तिन दोनों सैनावोंके मध्यदेशविषे भीष्मद्रोण दोनोंके सन्मुख तथा सर्व राजावोंके सन्मुख ता अर्जुनके उत्तम रथकूं स्थापन करता भया । इहां यद्यपि सर्व राजावोंके सन्मुख ता रथकूं स्थापन करता भया इतनै मात्र कहणेकरिकैही भीष्मद्रोणादिक सर्व राजावोंका ग्रहण होइ सकै है यातैं भीष्मद्रोणका पृथक् कहणा अनुचित है । तथापि सर्व राजावोंविषे ता भीष्मद्रोणकी अत्यंत प्रधानता बोधन करणेवासतै तिन दोनोंका पृथक् ग्रहण करा है । तहां रथकूं स्थापन करता भया इतनै कहणेकरिकैही यद्यपि निर्वाह होइ सकै है । तथापि दूसरे सर्व रथोंतैं ता रथविषे उत्कृष्टता बोधन करणेवासतै ता रथका उत्तम यह विशेषण दीया है । ता रथकी उत्कृष्टताविषे यह हेतु है । एक तौ सो रथ अग्निदेवतानैं दीया है । और दूसरा साक्षात् श्रीकृष्णभगवान् ता रथके चलावणेहारा सारथी है । और तीसरा साक्षात् अर्जुन जिस रथविषे स्थित है । और चतुर्थ हनुमान् जिस रथकी ध्वजाविषे स्थित है । इतनै हेतुवोंकरिकै ता रथविषे सर्व रथोंतें उत्कृष्टता है । ऐसे उत्तम रथकूं दोनों सैनावोंके मध्यविषे स्थापन करिकै सर्वके अंतर गुह्य अभिप्रायकूं जानणेहारा सो श्रीकृष्णभगवान् या अर्जुनकूं इन संबंधियोंके दर्शनतैं शोकमोहकी प्राप्ति भई है या प्रकार जानिकै उपहाससहित ता अर्जुनके प्रति या प्रकारका वचन कहता भया । हे पार्थ कुरुवंशविषे है उत्पत्ति जिनोंकी ऐसे जो यह भीष्मादिक एकठे हुए हैं । तिनोंकूं तूं भलीप्रकारतैं देख । इहां (हे पार्थ) या प्रकारके संबोधनकरिकै भगवान्नैं यह अर्थ सूचन करा । पृथा नामा माताका जो पुत्र होवै ताका नाम पार्थ है । सा पृथा अपणे स्त्रीस्वभावतैं सर्वदा शोकमोहकरिकै युक्त है । ता पृथाका तूं पुत्र है । यातैं तुमारेविषेभी सो शोकमोह प्राप्त भया है । या प्रकार अर्जुनके उपहासकूं पार्थ या शब्दकरिकै सूचन करता हुआ श्रीभगवान् अपणेविषे हृषीकेश शब्दका अर्थरूप अंतर्यामीपणा बोधन करता भया इति । अथवा (हे पार्थ) या संबोधनकरिकै भगवान्नैं अर्जुनके प्रति यह अर्थ सूचन करा । हमारे पिताकी भगिनी जो पृथा है । तिस

पृथाका तूं पुत्र है । यातैं तूं हमारा संबंधी है। यातैं यह कृष्णभगवान् हमारे सारथीपणेकूं छोडिकै दुर्योधनके पक्षविषे स्थित होवैगा या प्रकारकी चिंता तुमनैं कदाचित्भी नहीं करणी । किंतु हमारे सारथीपणेविषे तूं निश्चित होइकै इन भीष्मद्रोणादिकोंकूं निःशंक होइकै देख । इहां इन भीष्मद्रोणादिकोंकूं तूं देख या वचनपर्यंत जो भगवान्का कहणा है । ताका यह अभिप्राय है । मैं तुमारे सारथीपणेविषे अत्यंत सावधान हूं । और तूं तौ अबीही शोकमोहके वशतैं रथीपणेका परित्याग करा चाहता है । यातैं या सैनाके दर्शनकरिकै तुमारा कौन प्रयोजन सिद्ध भया । या प्रकार ता अर्जुनकूं धैर्यकी प्राप्ति करणेवासतै सो वचन भगवान्नैं कथन करा है । अन्यथा सो भगवान् दोनों सैनावोंके मध्यविषे रथकूं स्थापन करता भया इतनाही वचन कहणा योग्य था इति ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ शंका । ता दोनों सैनावोंके मध्यविषे स्थित होइकै सो अर्जुन क्या देखता भया । या प्रकारकी धृतराष्ट्रकी शंकाके हुए सो संजय कहे है ।

(मू. श्लो.) तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथपितामहान् । आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन् पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥ २६ ॥ श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि । (पदच्छेदः) ॥ तत्र । अपश्यत् । स्थितान् । पार्थः । पितॄन् । अथ । पितामहान् । आचार्यान् । मातुलान् । भ्रातॄन् । पुत्रान् । पौत्रान् । सखीन् । तथा ॥ २६ ॥ श्वशुरान् । सुहृदः । च । एव । सेनयोः । उभयोः । अपि । (पदार्थः) या सैनाकूं देखो ऐसी भगवान्की आज्ञाके हुए सो अर्जुन दोनों सैनावोंविषे स्थित पितृव्योंकूं तथा पितामहोंकूं तथा आचार्योंकूं तथा मातुलोंकूं तथा भ्रातावोंकूं तथा पुत्रोंकूं तथा पौत्रोंकूं तथा सखावोंकूं ॥ २६ ॥ तथा श्वशुरोंकूं तथा सुहृदोंकूं ही देखता भया ।

टीका । हे धृतराष्ट्र ता कृष्णभगवान्नैं युद्धके आरंभ करावणेवासतै जबी ता अर्जुनके प्रति सैना देखणेकी आज्ञा करी । तबी सो अर्जुन दोनों सैनावोंविषे स्थित जो योद्धा हैं तिनोंकूं देखता भया । तहां परसैनाविषे सो अर्जुन अपणे भूरिश्रवादिक पितृव्योंकूं देखता भया । तथा भीष्म सोमदत्त आदिक पितामहोंकूं देखता भया । तथा द्रोण कृप आदिक आचार्योंकूं देखता भया । तथा शल्य शकुनि आदिक मातुलोंकूं देखता भया । तथा दुर्योधन आदिक भ्रातावोंकूं देखता भया । तथा लक्ष्मण आदिक पुत्रोंकूं देखता भया । तथा तिन लक्ष्मणादिक पुत्रोंके पुत्रोंकूं देखता भया । तथा अपणे स-

मान अवस्थावाले अश्वत्थामा जयद्रथ आदिक सखावोंकूं देखता भया। तथा कृतवर्मा भगदत्त आदिक सुहृदोंकूं देखता भया। इहां (सुहृदः) या शब्दकरिकै दूसरेभी जितनैकी उपकार करणेहारे मातामहादिक हैं तिन सर्वोंका ग्रहण करणा। इस प्रकार जैसे परसैनाविषे सो अर्जुन अपणे पितृव्यादिक संबंधीयोंकूं देखता भया। तैसे अपणी सैनाविषेभी तिन पितृव्यादिक संबंधियोंकूंही देखता भया। इहां अपणे पिताके भ्राताका नाम पितृव्य है। और अपणी माताके भ्राताका नाम मातुल है। माताके पिताका नाम मातामह है इति ॥ २६ ॥ ❀ ॥ इस प्रकार सर्व संबंधियोंके दर्शन हुएतैं अनंतर यह संबंधियोंकी हिंसा महान् अधर्मरूप है या प्रकारकी मोहरूप विपरीतबुद्धिकरिकै नष्ट हुआ है विवेक जिसका तथा यह युद्धविषे स्थित हिंसा शास्त्रविहित होणेतैं धर्मरूप है या प्रकारके यथार्थ ज्ञानका प्रतिबंध करणेहारा तथा ममताबुद्धि है कारण जिसका ऐसा जो शोकमोहरूप चित्तका वैक्लव्य है ताकरिकै निवृत्त होइ गया है विवेक जिसका ऐसा जो अर्जुन है। ता अर्जुनकूं पूर्व आरंभ करे हुए युद्धरूप स्वधर्मतैं उपराम होणेकी इच्छा महान् अनर्थके देणेहारी उत्पन्न होती भई। या अर्थकूं अब निरूपण करे हैं।

(मू. श्लो.) तान्समीक्ष्य स कौंतेयः सर्वान्बंधूनवस्थितान् ॥ २७ ॥ कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्। (पदच्छेदः) तान्। समीक्ष्य। सः। कौंतेयः। सर्वान्। बंधून्। अवस्थितान् ॥ २७ ॥ कृपया। परया। आविष्टः। विषीदन्। इदं। अब्रवीत्। (पदार्थः) सो कुंतीका पुत्र अर्जुन तौ युद्धभूमिविषे स्थित तिन सर्व बांधवोंकूं भली प्रकार देखिकरिकै ॥ २७ ॥ परम कृपा करिकै व्याप्त हुआ विषादकूं प्राप्त हुआ या प्रकारका वचन कहता भया ॥

टीका। हे धृतराष्ट्र तिन सर्व बांधवोंकूं देखिकरिकै स्वतःसिद्ध कृपाकरिकै व्याप्त हुआ सो अर्जुन उपतापरूप विषादकूं प्राप्त हुआ या प्रकारका वचन श्रीभगवान्के प्रति कहता भया। इहां ता अर्जुनविषे स्वतःसिद्ध कृपाके बोधन करणेवासतै ता कृपाका परा यह विशेषण दीया है। अथवा। (कृपया परयाविष्टः) या वचनविषे कृपया अपरया आविष्टः या प्रकारका पदच्छेद करणा। या पक्षविषे ता वचनका ऐसा अर्थ करणा। अपणी सैनाविषे तौ ता अर्जुनकी पूर्वभी कृपा होती भई। और तिस कालविषे तौ ता अर्जुनकी कौरवोंकी सैनाविषेभी अपरा नामा दूसरी कृपा होती भई। इहां (विषीदन्निदमब्रवीत्) या वचनकरिकै विषाद वचन उच्चारण या दोनोंविषे समानकालपणा कथन करा। ताकरिकै ता वचनउच्चारणकालविषे गद्गदकंठता

तथा अश्रुपात इत्यादिक विषादके कार्योंकी स्थिति बोधन करी । काहेतैं या लोकविषे विषादवान् पुरुषके वचनविषे यह वार्त्ता प्रसिद्ध देखणेविषे आवै है । और (कौंतेयः) या पदका अभिप्राय तौ पूर्व श्लोकविषे कहे हुए पार्थपदके अभिप्रायकी न्यांई जानि लैणा । कुंतीकूंही पृथा नामकरिकै कथन करे हैं इति ॥ २७ ॥ ❀ ॥ अब श्रीकृष्णभगवान्‌केप्रति सो अर्जुनका वचन (अर्जुन उवाच) इसतैं आदि लैके (एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये) इस वाक्यतैं पूर्व ग्रंथकरिकै संजय कथन करे है । तहां स्वधर्मविषे प्रवृत्तिका कारणरूप जो तत्त्वज्ञान है । ता तत्त्वज्ञानका प्रतिबंधक जो अपणे शरीरविषे तथा परशरीरविषे यह मेरे हैं या प्रकारका आत्मीयत्व अभिमान है । ता अभिमानकरिकै युक्त तथा केवल अनात्मपदार्थोंकूं जानणेहारा तथा इस युद्धकरिकै हमारा तथा इन बांधवोंका अवश्य नाश होवैगा या प्रकार देखणेहारा ऐसा जो अर्जुन है । ता अर्जुनकूं महान् शोक प्राप्त होता भया । ता अर्जुनके शोककूं ता शोककरिकै व्याप्त लिंगोंके कथनपूर्वक तीन श्लोकोंकरिकै निरूपण करे हैं ।

(मू. श्लो.) अर्जुन उवाच । दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितं ॥ २८ ॥ सीदंति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति । वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते ॥ २९ ॥ (पदच्छेदः) दृष्ट्वा । इमं । स्वजनं । कृष्ण । युयुत्सुं । समुपस्थितं ॥ २८॥ सीदंति । मम । गात्राणि । मुखं । च । परिशुष्यति । वेपथुः । च । शरीरे । मे । रोमहर्षः । च । जायते ॥ २९ ॥ (पदार्थः) हे कृष्ण । या रणभूमिविषे प्राप्त हुए तथा युद्धकी इच्छावाले इन बांधवोंकूं देखिकरिकै हमारे हस्तपादादिक अंग व्यथाकूं प्राप्त होवै हैं तथा मेरा मुखभी सूकता जावे है तथा हमारे शरीरविषे कंप उत्पन्न होवे है तथा हमारे रोमांच खडे होवै हैं ॥२८॥२९॥

टीका । हे श्रीकृष्णभगवन् युद्धकी इच्छाकरिकै या रणभूमिविषे प्राप्त भये जो यह भीष्मादिक हमारे बांधव हैं । तिनोंकूं देखिकरिकै हमारे चित्तविषे उत्पन्न भया जो शोक है । ता शोककरिकै यह हमारे हस्तपादादिक अंग बहुत व्यथाकूं प्राप्त होवै हैं । तथा यह हमारा मुखभी सूकता जावै है । तथा यह हमारे शरीरविषे कंप उत्पन्न होवै है । तथा हमारे रोमांच खडे होवै हैं । इहां यद्यपि (मुखं च शुष्यति) इतनै कहणेकरिकैही निर्वाह होइ सकै है । तथापि श्रमादिक निमित्तोंतैं जो मुखका शोषण होवै है । तिसकी अपेक्षाकरिकै शोकजन्य मुखके शोषणविषे अधिकता कथन करणेवासतै (परिशुष्यति) इहां परि या शब्दका कथन करा है इति ॥ २८ ॥ २९ ॥ ❀ ॥ किं च ।

(मू. श्लो.) गांडीवं स्रंसते हस्तात् त्वक्चैव परिदह्यते । न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥ ३० ॥ निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ॥ (पदच्छेदः) गांडीवं । स्रंसते । हस्तात् । त्वक् । च । एव । परिदह्यते । न । च । शक्नोमि । अवस्थातुं । भ्रमति । इव । च । मे । मनः ॥ ३० ॥ निमित्तानि । च । पश्यामि । विपरीतानि । केशव । (पदार्थः) हे केशव मेरे हस्ततैं गांडीव धनुष नीचे पडि जावे है तथा मेरी त्वचा दाहकूं प्राप्त होवे है तथा मेरा मनभी भ्रमण करे है यातैं अपणे शरीरके स्थित करणेकूंभी मैं नहीं समर्थ होवौ हूं ॥ ३० ॥ तथा मैं विपरीत निमित्तोंकूंभी देखता हूं ॥ ॥

टीका । हे भगवन् ता शोककरिकै यह गांडीव धनुषभी हमारे हस्ततैं नीचै पडि जाता है । तथा हमारी त्वचाभी अत्यंत दाहकूं प्राप्त होवै है । इह हमारा धनुष नीचै पडि जावै है । या वचनके कहणेकरिकै अर्जुननैं अपणा अधैर्यरूप दौर्बल्यता बोधन करी । और मेरी त्वचा दाहकूं प्राप्त होवै है या वचनके कहणेकरिकै अर्जुननैं अपणे अंतरका संताप सूचन करा । और इस कालविषे मैं अपणे शरीरके स्थित करणेविषेभी समर्थ नहीं हूं । इतनै कहणेकरिकै अर्जुननैं अपणे मूर्च्छा अवस्थाकूं सूचन करा । जिस कारणतैं मूर्च्छा अवस्थाविषेही यह पुरुष अपणे शरीरके स्थित करणेविषे समर्थ नहीं होवै है । अब ता मूर्च्छा अवस्थाकी प्राप्तिविषे हेतु कहे है । (भ्रमतीव च मे मन इति) यह मेरा मन भ्रमण करता पुरुषकी न्यांई भ्रमण करे है । सो भ्रमण करता पुरुषकी सादृश्यतारूप जो मनका कोई विकारविशेष है । जिसकूं (इव) या शब्दकरिकै कथन करा है । सोईही विकारविशेष मूर्च्छाकी पूर्व अवस्था होवै है । (न च शक्नोमि) या वचनविषे स्थित जो चकार है । सो हेतुका वाचक है । ताका यह अर्थ है । जिसवासतै हमारा मन ता मूर्च्छाके पूर्व अवस्थाकूं प्राप्त भया है । इसवासतै मैं या अपणे शरीरकूं अबी स्थित करणेविषे समर्थ नहीं हूं । अब ता शरीरके स्थित करणेकी असामर्थ्यविषे दूसराभी निमित्त कथन करे हैं । (निमित्तानीति) हे भगवन् थोडेही कालविषे दुःखकी प्राप्तिकूं सूचन करणेहारे जो वाम नेत्रका स्फुरणादिक विपरीत निमित्त हैं । तिनोंकूंभी मैं अनुभव करता हूं । इस कारणतैंभी मैं स्थित होणेकूं समर्थ नहीं होता । इहां अठावीसवे श्लोकविषे (दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण) या वचनविषे स्थित जो (कृष्ण) यह संबोधन है । ताकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । मैं अर्जुन अनात्मवेत्ता होणेतैं दुःखी हूं । या कारणतैं मैं शोकजन्य क्लेशकूं अनुभव करता हूं । और "कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः । तयोरैक्यं परं ब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते" ॥ अर्थ यह । कृष्धातु सत्ता-

वाचक है। और णप्रत्यय आनंदका वाचक है ता सत्ता और आनंद दोनोंका एकताभावरूप परब्रह्म कृष्ण या नामकरिकै कह्या जावै है इति। या शास्त्रके वचनतैं आप सत् आनंदरूप होणेतैं शोकमोहादिक विकारोंतैं रहित हो। तात्पर्य यह। अपणे बांधवोंका दर्शन जैसे हमारेकूं भया है तैसे आपकूंभी तिन बांधवोंका दर्शन भया है। परंतु हमारे न्यांई आपकूं शोकमोहादिक विकार प्राप्त हुए नहीं। यह आपविषे महान् विशेषता है। यातैं आपकी न्यांई हमारेकूंभी शोकतैं रहित करो। यह सर्व अर्थ ता अर्जुननैं (हे कृष्ण) या संबोधनकरिकै सूचन करा। तहां तुमारे शोकके निवृत्त करणेका हमारेविषे सामर्थ्य नहीं है। ऐसी भगवान्‌की शंकाके निवृत्त करणेवासतै सो अर्जुन (हे केशव) या संबोधनकरिकै ता भगवान्‌विषे अपणे शोक निवृत्त करणेका सामर्थ्य सूचन करता भया। तहां केशौ वाति अनुकंप्यतया गच्छतीति केशवः। अर्थ यह। जगतकूं उत्पन्न करणेहारे ब्रह्माका नाम क है। और जगतके संहार करणेहारे रुद्रका नाम ईश है। तिन दोनोंकूं अपणे अनुग्रहका पात्र जानिकरिकै जो प्राप्त होवै ताका नाम केशव है। ऐसे आपकूं हमारे शोकके निवृत्त करणेविषे किंचितमात्रभी प्रयत्न नहीं है। अथवा (कृष्ण) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं श्रीभगवान्‌विषे भक्तजनोंके दुःखका निवर्त्तकपणा बोधन करा। और (केशव) या संबोधनकरिकै केशी आदिक दुष्ट दैत्योंकी निवृत्तिकरिकै सर्वदा भक्तजनोंकी प्रतिपालकता सूचन करी। ऐसा आपका स्वभाव है। यातैं हमारेकूंभी शोककी निवृत्तिकरिकै अवश्य पालन करौगे इति॥३०॥ तहां समीचीन प्रवृत्तिका कारणरूप जो तत्त्वज्ञान है। ता तत्त्वज्ञानका प्रतिबंधक जो शोक है ता शोकका पूर्व मुखशोषणादिक लिंगोंद्वारा तीन श्लोकोंकरिकै निरूपण करा। अब ता शोककरिकै जन्य जो विपरीत प्रवृत्तिका कारणरूप विपरीत बुद्धि है ता विपरीत बुद्धिका निरूपण करे हैं।

(मू. श्लो.) नच श्रेयोनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥३१॥ (पदच्छेदः) नच। श्रेयः। अनुपश्यामि। हत्वा। स्वजनं। आहवे ॥३१॥
(पदार्थः) इस युद्धविषे अपणे बांधवोंकूं हनन करिकै मैं अपणे श्रेयकूं नहीं देखता हूं ॥ ३१ ॥

टीका। हे भगवन् इस युद्धविषे इन भीष्मादिक बांधवोंके मारणेकरिकै मैं अपणे श्रेयकूं देखता नहीं। इहां पुरुषार्थका नाम श्रेय है। और यह पुरुष जिस पदार्थके प्राप्तिकी प्रार्थना करे है। ता पदार्थका नाम पुरुषार्थ है। सो पुरुषार्थरूप श्रेय दो प्रकारका होवै है। एक तौ दृष्टश्रेय होवै है और दूसरा अदृष्टश्रेय होवै है। तहां इस लोकके जो राज्यादिक सुख हैं तिनोंका नाम दृष्टश्रेय है। और स्वर्गादिक सुखोंका नाम अदृष्टश्रेय है। ता दोनों प्रकारके श्रेयोंकी प्राप्ति इन बांधवोंके मारणेकरिकै मैं देखता नहीं ॥ शंका ॥ हे अर्जुन इस युद्धविषे स्वजनोंके मारणेकरिकै श्रेयकी प्राप्ति तौ होवै है। परंतु सा

श्रेयरूप फलकी प्राप्ति बहुत विचार कीयेतैं अनंतर प्रतीत होवै है। थोडे विचार कीयेतैं प्रतीत होवै नहीं। ऐसी भगवान्‌की शंकाके निवृत्त करणेवासतै अर्जुननैं (अनुपश्यामि) या वचनविषे (अनु) यह शब्द कथन करा है। ता अनुशब्दका पश्चात् यह अर्थ होवै है। और पूर्ववृत्तांतकी अपेक्षा करिकैही पश्चात् कह्या जावै है। यातैं यह अर्थ सिद्ध होवै है। बहुत विचार कीयेतैं पश्चात्‌भी मैं बांधवोंके मारणेकरिकै अपणे श्रेयकूं देखता नहीं। और (स्वजनं) या कहणेकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा। जो अपणे संबंधी नहीं हैं तिनोंका युद्धविषे हनन करिकैभी मैं अपणे श्रेयकूं देखता नहीं। काहेतैं शास्त्रविषे यह कह्या है। श्लोक ॥ "द्वाविमौ पुरुषौ लोके सूर्यमंडलवर्त्तिनौ। परिव्राट् योगयुक्तश्च रणे चाभिमुखो हतः" ॥ अर्थ यह। इस लोकविषे दो प्रकारके पुरुषही सूर्यमंडलविषे स्थित होवै हैं। एक तौ योगकरिकै युक्त संन्यासी और दूसरा युद्धविषे सन्मुख हुआ जो पुरुष मरणकूं प्राप्त हुआ है इति। इत्यादिक शास्त्रके वचनकरिकै युद्धतिषे मृत्युकूं प्राप्त हुए योद्धाकूंही स्वर्गादिक श्रेयकी प्राप्ति कथन करी है। हनन करता पुरुषकूं किंचित्‌मात्रभी श्रेयकी प्राप्ति शास्त्रनैं कथन करी नहीं। यातैं अपणे अस्वजनोंके मारणेकरिकैभी जबी श्रेयकी प्राप्ति नहीं होवै है। तबी अपणे स्वजनोंके मारणेकरिकै ता श्रेयकी प्राप्ति कैसे होवैगी। किंतु नहीं होवैगी। यह सर्व अर्थ अर्जुननैं (स्वजनं) या शब्दकरिकै सूचन करा। और सिद्धसाधनरूप दोषकी निवृत्ति करणेवासतै अर्जुननैं (आहवे) यह पद कथन करा है। काहेतैं (आहवे) यह युद्धका वाचक पद जो नहीं कहते। तौ युद्धतैं विना बांधवोंकी हिंसा करिकै श्रेयकी प्राप्ति कोईभी शास्त्रवेत्ता पुरुष अंगीकार करता नहीं। तिसी अर्थकूं अर्जुननैंभी सिद्ध करा। यातैं सिद्ध अर्थका साधनरूप सिद्धसाधनदोष अर्जुनकूं प्राप्त होता। ता दोषकी निवृत्ति करणेवासतै अर्जुननैं (आहवे) यह पद कथन करा है। तात्पर्य यह। युद्धतैं विना संबंधीयोंके मारणेकरिकै श्रेयकी प्राप्तिकूं कोईभी पुरुष अंगीकार करता नहीं। और मैं तौ युद्धविषेभी संबंधीयोंके मारणेकरिकै श्रेयकी प्राप्ति देखता नहीं इति ॥ ३१ ॥ ❀ ॥ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन युद्धविषे अपणे स्वजनोंके मारणेकरिकै स्वर्गादिकरूप अदृष्टप्रयोजनकी प्राप्ति तौ मत होवै। परंतु युद्धविषे तिन स्वजनोंके मारणेकरिकै तुमारेकूं विजय, राज्य, विषयसुख या दृष्टप्रयोजनकी प्राप्ति तौ निर्विवाद है। ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है।

(मू. श्लो.) न कांक्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च। किं नो राज्येन गोविंद किं भोगैर्जीवितेन वा ॥ ३२ ॥ (पदच्छेदः) न[3]। कांक्षे[1]। विजयं[2]। कृष्ण। न[4]। च[5]। राज्यं। सुखानि। च[8]। किं[13]। नः[11]। राज्येन[12]। गोविंद[13]। किं[15]। भोगैः[14]। जी-

वितेन । वा ॥३२॥ (पदार्थः) हे कृष्ण मैं विजयकूं नहीं चाहता तथा राज्यकूंभी नहीं चाहता तथा सुखोंकूंभी नहीं चाहता हे गोविंद हमारेकूं इस राज्यकरिकै क्या फल होवैगा तथा विषयसुखोंकरिकै क्या फल होवैगा तथा विजयकरिकै क्या फल होवैगा किंतु तिनोंकी प्राप्तिकरिकै किंचित्मात्रभी फल नहीं होवैगा ॥ ३२ ॥ ॥ ॥

टीका । हे कृष्णभगवान् अपणे बांधवोंकी हिंसा करिकै प्राप्त होणेहारा जो विजय है । तिस विजयके प्राप्तिकी मैं इच्छा करता नहीं । तथा ता विजयतैं पश्चात् प्राप्त होणेहारा जो राज्य है । ता राज्यके प्राप्तिकीभी मैं इच्छा करता नहीं । तथा ता राज्यकी प्राप्तितैं पश्चात् प्राप्त होणेहारे जो विषयजन्य सुख हैं । तिन विषयसुखोंके प्राप्तिकीभी मैं इच्छा करता नहीं । इतनै कहणेकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । या लोकविषे तिस तिस फलकी इच्छावान् पुरुषही तिस तिस फलकी प्राप्तिके उपायविषे प्रवृत्त होवै है । फलकी इच्छातैं रहित पुरुष ता फलके उपायविषे प्रवृत्त होवै नहीं । जैसे भोजनरूप फलके प्राप्तिकी इच्छावान् पुरुषही ता भोजनरूप फलकी प्राप्तिके उपायरूप अन्नपाकविषे प्रवृत्त होवै है । भोजनकी इच्छातैं रहित पुरुष ता अन्नके पकावणेविषे प्रवृत्त होवै नहीं । तैसे विजय, राज्य, विषयसुख इन फलोंके प्राप्तिकी जिस पुरुषकूं इच्छा होवै । सो पुरुष तिन विजयादिक फलोंकी प्राप्तिके उपायरूप युद्धविषे प्रवृत्त होवै । और हमारेकूं तौ तिन विजयराज्यादिक फलोंके प्राप्तिकी इच्छा है नहीं । यातैं इस युद्धरूप उपायविषे हमारी प्रवृत्ति संभवै नहीं । शंका । हे अर्जुन अन्य दुर्योधनादिकोंके इच्छाका विषयरूप जो यह विजय, राज्य, सुख आदिक हैं । तिनोंविषे तुमारेकूं इच्छाका अभाव किस वासतै हुआ है । ऐसी भगवान्की शंकाके हुए अर्जुन कहे है (किं नो राज्येनेति) हे गोविंद धर्म अधर्मके स्वरूपकूं नहीं जानणेहारे जो यह दुर्योधनादिक हैं । तिनोंकूं इन राज्यसुखादिकोंविषे इच्छा होवो । परंतु धर्म अधर्मके स्वरूपकूं जानणेहारे जो हम हैं । तिन हमारेकूं या प्रसिद्ध राज्यकरिकै तथा विषयसुखोंकरिकै तथा जीवनका साधनरूप विजयकरिकै किस प्रयोजनकी प्राप्ति होवैगी । किंतु तिन राज्यादिकोंकरिकै हमारा किंचित्मात्रभी प्रयोजन सिद्ध नहीं होवैगा । तात्पर्य यह । विजय, राज्य, भोग इन तीनोंकी प्राप्तितैं विनाही वनविषे निवास करणेहारे जो हम हैं । तिन हमारा तिस संतोषकरिकैही या जगत्विषे कीर्त्तिपूर्वक जीवन होवैगा । यातैं इन राज्यादिकोंके प्राप्तिकी हमारेकूं इच्छा है नहीं। इहां (हे गोविंद) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा। गो नाम इंद्रियोंका है। तिन इंद्रियोंकूं अधिष्ठानरूपकरिकै जो नित्यही प्राप्त होवै। ताका नाम गोविंद है।ऐसे अंतर्यामी स्वरूप आप हमारे इस लोकके

राज्यादिक फलोंतैं वैराग्यकूं भली प्रकार जाणते हो इति ॥ ३२ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन धर्मशास्त्रविषे यह वचन कह्या है ॥ श्लोक ॥ "वृद्धौ च मातापितरौ भार्या साध्वी सुतः शिशुः । अप्यकार्यशतं कृत्वा भर्त्तव्या मनुरब्रवीत्" । अर्थ यह । अपणे वृद्ध जो मातापिता हैं । तथा पतिव्रता जो स्त्री है । तथा बाल्य अवस्थावाले जो पुत्र हैं । यह सर्व बांधव इस पुरुषनैं न करणेयोग्य अनेक कार्योंकूं करिकैभी भरणपोषण करणेयोग्य हैं । यह वार्ता मनुभगवान् कहता भया है इति । इत्यादिक शास्त्रोंके वचनतैं वृद्ध मातापितादिक संबंधीयोंके भरणपोषणवासतै करा हुआभी अधर्म या पुरुषके दोषवासतै होवै नहीं । यातैं जो कदाचित् तुमारेकूं इन राज्यसुखादिकोंतैं वैराग्यभी होवै । तौभी इन अपणे संबंधीयोंके राज्यसुखादिकोंवासतै तुमारेकूं इस युद्धविषे प्रवृत्त होणा चाहीये । ऐसी भगवान्की शंकाके हुए अर्जुन कहे है । ॥ ॥ ॥

(मू० श्लो०) येषामर्थे कांक्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च । त इमेवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥ ३३ ॥ (पदच्छेदः) । येषां । अर्थे । कांक्षितं । नः । राज्यं । भोगाः । सुखानि । च । ते । इमे । अवस्थिताः । युद्धे । प्राणान् । त्यक्त्वा । धनानि । च ॥ ३३ ॥ (पदार्थः) हे भगवन् हमारेकूं जिनं बांधवोंके वासतै राज्य तथा विषय तथा सुख अपेक्षित हैं ते यह बांधव अपणे प्राणोंकी आशाकूं तथा धनकी आशाकूं त्याग करिकै इस युद्धविषे स्थित हुए हैं ॥ ३३ ॥ ॥ ॥

टीका । हे भगवन् एकाकी पुरुषकूं तौ यह राज्यादिक अपेक्षित होवै नहीं । और जिन बांधवोंके वासतै हमारेकूं यह राज्य अपेक्षित है । तथा सुखके साधनरूप विषय अपेक्षित हैं । तथा विषयजन्य सुख अपेक्षित हैं । ते यह हमारे बांधव अपणे प्राणोंकी आशाकूं छोडिकरिकै तथा धनकी आशाकूं छोडिकरिकै मरणेवासतै इस युद्धभूमिविषे स्थित हुए हैं । यातैं अपणे स्वार्थवासतै तथा अपणे संबंधीयोंके स्वार्थवासतै इस युद्धरूप कार्यविषे हमारी प्रवृत्ति संभवती नहीं । इहां पूर्वश्लोकविषे यद्यपि भोगशब्दकरिकै विषयजन्य सुखका ग्रहण करा था । तथापि इस श्लोकविषे भोगोंतैं सुखकूं भिन्न ग्रहण करा है । यातैं इहां भोगशब्दकी लक्षणावृत्तिकरिकै सुखके साधनरूप स्पर्शादिक विषयोंका ग्रहण करणा । और (प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च) या वचनविषे प्राणोंका त्याग तथा धनका त्याग कथन करा है । सो जीवत अवस्थाविषे प्राणोंका त्याग तथा धनका त्याग संभवता नहीं । यातैं प्राणशब्दकी लक्षणावृत्तिकरिकै प्राणकी आशाका ग्रहण करणा । और धनशब्दकी लक्षणावृत्तिकरिकै धनकी आशाका ग्रहण करणा । तिन प्राणादिकोंके आशाका परित्याग जीवत अवस्थाविषे

भी संभव होइ सकै है । तहां अपणे प्राणोंके त्याग हुएभी अपणे बांधवोंके सुखवासतै धनकी आशा संभव होइ सकै है । या शंकाकी निवृत्ति करणेवासतै प्राणोंतैं भिन्न धनका ग्रहण करा है इति ॥ ३३ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन जिन बांधवोंके सुखवासतै तुमारेकूं यह राज्यादिक अपेक्षित है । ते तुमारे बांधव इस युद्धविषे आए नहीं । ऐसी भगवान्‌की शंकाके निवृत्त करणेवासतै सो अर्जुन तिन बांधवोंका विशेषकरिकैं वर्णन करे है ।

(मू० श्लो०) आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः ॥ मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः संबंधिनस्तथा ॥ ३४ ॥ (पदच्छेदः) आचार्याः । पितरः । पुत्राः । तथा । एव । च । पितामहाः । मातुलाः । श्वशुराः । पौत्राः । श्यालाः । संबंधिनः । तथा ॥ ३४ ॥ (पदार्थः) हे भगवान् इस युद्धभूमिविषे कोई तो हमारे आचार्य हैं तथा कोई पितर हैं तथा कोई पुत्र हैं तथा कोई पितामह हैं तथा कोई मातुल हैं तथा कोई श्वशुर हैं तथा कोई पौत्र हैं तथा कोई श्याले हैं तथा कोई संबंधी हैं ॥ ३४ ॥

टीका । इस श्लोकका अर्थ स्पष्टही है । ताका अभिप्राय यह है । इस युद्धभूमिविषे जितनै कि योद्धा एकठे हुए हैं । ते सर्व योद्धा हमारे संबंधीही हैं । तिन संबंधीयोंतैं भिन्न कोई है नहीं । ते सर्व संबंधी तौ अबी मरणेकूं तयार हुए हैं । यातैं किस संबंधीके राज्यसुखादिकोंवासतै मैं इस युद्धविषे प्रवृत्त होवौं इति ॥ ३४ ॥ ❀ ॥ शंका । हे अर्जुन जो कदाचित् कृपाकरिकै तूं इन भीष्मद्रोणादिकोंकूं नहीं हनन करैगा । तौभी यह भीष्मद्रोणादिक राज्यके लोभकरिकै तुमारेकूं अवश्य हनन करैंगे । यातैं तुमही इन भीष्मद्रोणादिकोंकूं हनन करिकै राज्यकूं भोगो । ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है ।

(मू. श्लो.) एतान्न हंतुमिच्छामि घ्नतोपि मधुसूदन । अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किंनु महीकृते ॥ ३५ ॥ (पदच्छेदः) एतान् । न । हंतुं । इच्छामि । घ्नतः । अपि । मधुसूदन । अपि । त्रैलोक्यराज्यस्य । हेतोः । किंनु । महीकृते ॥ ३५ ॥ (पदार्थः) हे मधुसूदन मेरेकूं हनन करते हुए भी इन आचार्यादिकोंकूं मैं तीनं लोकके राज्यकी प्राप्तिवासतै भी हनन करणेकूं नहीं इच्छां करता तौ इस पृथिवीमात्रके राज्यकी प्राप्तिवासतै मैं इनोंके हननकी इच्छा कैसे करौंगा ॥ ३५ ॥

टीका । हे मधुसूदन भगवान् तीक्ष्ण शस्त्रोंकरिकै हमारेकूं हनन करणेहारेभी जो यह पूर्व उक्त आचार्यादिक हैं । तिनोंके हनन करणेकी इच्छामात्रभी मैं नहीं करता । तौ तिन आचार्यादिकोंकूं मैं तीक्ष्ण शस्त्रोंकरिकै किस प्रकार हनन करौंगा । किंतु नहीं हनन करौंगा । किंवा तिन आचार्यादिकोंके

हनन करणेकरिकै जो कदाचित् हमारेकूं भूमि, स्वर्ग और पाताल या तीन लोकोंके राज्यकीभी प्राप्ति होइ जावै। तौभी मैं इन आचार्यादिकोंके हननकी इच्छा करता नहीं। तौ इस पृथिवीमात्रके राज्यकी प्राप्तिवासतै मैं इन आचार्यादिकोंकूं नहीं हनन करौंगा याकेविषे क्या कहणा है। इहां (हे मधुसूदन) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं श्रीभगवान्‌विषे वैदिक मार्गका प्रवर्त्तकपणा सूचन करा। ऐसे वैदिक मार्गके प्रवर्त्तक होइकै आप हमारेकूं आचार्यादिकोंके हननविषे किसवासतै प्रवृत्त करते हो इति ॥ ३५ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन आचार्यादिकोंके मारणेविषे जो तूं दोष मानता है। तौ तिन आचार्य आदिकोंकूं छोडिकै दूसरे धृतराष्ट्रके दुर्योधनादिक पुत्रोंकूं तुम हनन करो। काहेतैं इन दुर्योधनादिकोंनैं तुमारेकूं लाक्षागृहविषे दाहादिकोंकरिकै बहुत प्रकारके दारुण दुःखोंकी प्राप्ति करी है। यातैं तिन दुर्योधनादिकोंके हनन करणेविषे तुमारी प्रीति संभवै है। ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है।

(मू. श्लो.) निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन। पापमेवाश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः ॥ ३६ ॥ (पदच्छेदः) निहत्य। धार्तराष्ट्रान्। नः। का। प्रीतिः। स्यात्। जनार्दन। पापं। एव। आश्रयेत्। अस्मान्। हत्वा। एतान्। आततायिनः ॥ ३६ ॥ (पदार्थः) हे जनार्दन इन दुर्योधनादिकोंकूं हनन करिकै हमारेकूं कौन प्रीति होवैगी किंतु कोइभी प्रीति नहीं होवैगी उलटा इन आततायियोंकूं हनन करिकै हमारेकूं पापही आश्रयण करैगा ॥ ३६ ॥

टीका। हे जनार्दन धृतराष्ट्रके पुत्र जो यह दुर्योधनादिक हैं। ते हमारे भ्राता हैं। तिन भ्रातावोंकूं हनन करिकै हमारेकूं कौन सुख होवैगा। किंतु तिनोंके हनन करिकै हमारेकूं किंचित् मात्रभी सुखकी प्राप्ति नहीं होवैगी। तात्पर्य यह। मूढ जनोंके प्रीतिका विषय जो क्षणमात्रवर्त्ति सुखाभास है। ता सुखाभासके लोभकरिकै बहुत कालपर्यंत नरकके प्राप्तिका हेतुरूप यह बांधवोंकी हिंसा हमारेकूं करणेयोग्य नहीं है। इहां जो सुखरूपतातैं रहित होवै तथा सुखकी न्याईं प्रतीत होवै ताकूं सुखाभास कहे हैं। ऐसे विषयजन्य सुख हैं इति। और (हे जनार्दन) या संबोधनकरिकै। अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा। हे भगवन् यह दुर्योधनादिक जो कदाचित् मारणेही योग्य होवैं। तौभी आपही इनोंकूं हनन करो। जिस कारणतैं प्रलयकालविषे सर्व जनोंके हननकरिकैभी आपकूं किंचित्‌मात्रभी पापका स्पर्श होता नहीं इति। शंका। हे अर्जुन शास्त्रविषे यह वचन कह्या है। श्लोक। "अग्निदो गरदश्चैव श-

स्त्रपाणिर्धनापहः ॥ क्षेत्रदारापहारी च षडेते आततायिनः" । अर्थ यह । अग्निके देणेहारा तथा विषके देणेहारा तथा शस्त्र जिसके हाथविषे है तथा परधनके हरण करणेहारा तथा पराए क्षेत्रके हरण करणेहारा तथा परस्त्रीके हरण करणेहारा यह षट् आततायी कहे जावै हैं इति । और इन दुर्योधनादिकोंविषे तौ सो षट् प्रकारकाही आततायीपणा है । और दूसरे शास्त्रविषे यह कह्या है । श्लोक । "आततायिनमायांतं हन्यादेवाविचारयन् ॥ नाततायिवधे दोषो हंतुर्भवति कश्चन । अर्थ यह । अकस्मात्तैं आया हुआ जो आततायी पुरुष है । तिस आततायी पुरुषकूं यह बुद्धिमान् पुरुष तिसी कालविषेही हनन करै । ताके हनन करणेविषे किंचित्मात्रभी विचार नहीं करै । जिस कारणतैं तिस आततायी पुरुषके हनन करणेविषे ता हनन करणेहारे पुरुषकूं किंचित्मात्रभी दोष होवै नहीं इति । या शास्त्रके वचनतैं आततायीके मारणेकरिकै दोषाभाव प्रतीत होवै है । यातैं यह दुर्योधनादिक आततायी तुमारेकूं अवश्य हनन करणे योग्य हैं । ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है । (पापमेवेति) इन दुर्योधनादिक आततायीयोंकूंभी हनन करिकै स्थित हुए हमारेकूं पाप अवश्य आश्रयण करैगा । अथवा । इनोंके हनन करिकै हमारेकूं केवल पापही आश्रयण करैगा । दूसरा कोई दृष्टप्रयोजन तथा अदृष्टप्रयोजन प्राप्त होवैगा नहीं । 'और आततायिनं हन्यात्' यह पूर्व उक्त वचन यद्यपि आततायी पुरुषोंके हननका विधान करे है । तथापि सो वचन अर्थशास्त्रका है । धर्मशास्त्रका सो वचन है नहीं । ता अर्थशास्त्रतैं धर्मशास्त्र बलवान् होवै है । और धर्मशास्त्र तौ प्राणिमात्रकी हिंसा करणेका निषेध करे है । सो धर्मशास्त्र यह है । "स एव पापिष्ठतमो यः कुर्यात्कुलनाशनं इति" ॥ "न हिंस्यात्सर्वाभूतानि इति" ॥ अर्थ यह । जो पुरुष अपणे कुलका नाश करै है । सोईही पुरुष अत्यंत पापिष्ठ जानणा । और यह बुद्धिमान् पुरुष सर्व भूतप्राणियोंकी हिंसा नहीं करै इति । यह धर्मशास्त्र पूर्व उक्त अर्थशास्त्रतैं बलवान् है । यातैं इन बांधवोंका हनन करणा हमारेकूं होग्य नहीं है । अथवा (पापमेवाश्रयेत्) इत्यादिक अर्द्ध श्लोकका या प्रकारतैं दूसरा व्याख्यान करणा । शंका । हे अर्जुन दुर्योधनादिकोंके हनन करणेविषे यद्यपि तुमारेकूं प्रीति नहीं है । तथापि तुमारेकूं हनन करणेविषे इन दुर्योधनादिकोंकूं प्रीति है । यातैं यह दुर्योधनादिक तुमारेकूं अवश्यकरिकै हनन करैंगे । ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है (पापमेवेति) पापं । एवं । आश्रयेत् । अस्मान् । हत्वा । एतान् । आततायिनः ॥ अर्थ यह । हमारेकूं हननकरिकै स्थित हुए इन दुर्योधनादिक आततायीयोंकूं केवल पापही आश्रयण करैगा । दूसरा कोई सुख इनोंकूं प्राप्त नहीं होवैगा । तात्पर्य यह । यह दुर्योधनादिक पूर्व तौ आततायी हैंही । और नहीं युद्ध करणेहारे हमारेकूं हनन करिकै अबीभी यह दुर्योधनादिकही पापी होवैंगे । इसविषे हमारेकूं कोई पापका संबंध है नहीं । यातैं हमारेकूं किंचि-

त्मात्रभी हानीकी प्राप्ति नहीं इति ॥ ३६ ॥ ❀ तहां अन्य प्राणियोंकी हिंसा करणेविषे कोई फल है नहीं । उलटी अनर्थकीही प्राप्ति होवै है । यातैं किसीभी प्राणीकी हिंसा करणे योग्य नहीं है । यह वार्त्ता (न च श्रेयोनुपश्यामि) इस वचनतैं आदि लैके अबपर्यंत अर्जुननैं कथन करी । अब ता वार्त्ताकी समाप्ति करै है ।

(मू॰ श्लो॰) तस्मान्नार्हा वयं हंतुं धार्तराष्ट्रान्स्वबांधवान् । स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥३७॥ (पदच्छेदः) तस्मात् । न । अर्हाः । वयं । हंतुं । धार्तराष्ट्रान् । स्वबांधवान् । स्वजनं । हि । कथं । हत्वा । सुखिनः । स्याम । माधव ॥ ३७ ॥ (पदार्थः) हे माधव तिस कारणतैं हम अपणे बांधव धृतराष्ट्रके दुर्योधनादिक पुत्रोंकूं हनन करणेकूं नहीं योग्य हैं जिस कारणतैं अपणे बांधवोंकूं हनन करिकै हम कैसे सुखी होवैंगे किंतु नहीं सुखी होवैंगे ॥ ३७ ॥

टीका । इहां (तस्मात्) या तत् शब्दकरिकै पूर्व कथन करा जो बांधवोंकी हिंसा करणेविषे अदृष्टरूप फलका अभाव तथा अनर्थकी प्राप्ति तिन दोनोंका ग्रहण करणा ॥ ताकरिकै यह अर्थ सिद्ध होवै है । जिस कारणतैं बांधवोंकी हिंसा करिकै स्वर्गादिरूप अदृष्टफलकी प्राप्ति होवै नहीं । उलटी महान् अनर्थकी प्राप्ति होवै है । तिस कारणतैं हम अपणे दुर्योधनादिक बांधवोंके हनन करणेकी इच्छा करते नहीं । शंका । हे अर्जुन बांधवोंके हनन करिकै स्वर्गादिरूप अदृष्टसुखकी प्राप्ति मत होवो । तथापि इस लोकका दृष्टसुख तौ तुमारेकूं अवश्यकरिकै प्राप्त होवैगा । ऐसी भगवान्‌की शंकाकरिकै अर्जुन कहे है (स्वजनंहीति) हे माधव अपणे संबंधीयोंके सुखवासतैही श्रेष्ठ पुरुषोंकी प्रवृत्ति होवै है । यातैं अपणे संबंधीयोंकूंही हनन करिकै हम किस प्रकार सुखकूं प्राप्त होवैंगे । किंतु उलटे दुःखकूंही प्राप्त होवैंगे । इहां (हे माधव) या संबोधनकरिकै अर्जुननैं यह अर्थ सूचन करा । मा नाम लक्ष्मीका है । धव नाम पतिका है । लक्ष्मीका जो पति होवै ताका नाम माधव है । ऐसा लक्ष्मीका पति होइकै आप हमारेकूं लक्ष्मीतैं रहित बांधवोंकी हिंसारूप निंदित कर्मविषे प्रवृत्त करणे योग्य नहीं हो इति ॥ ३७ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन युद्धविषे अपणे बांधवोंकी हिंसा करिकै जो कदाचित् किसी दृष्टअदृष्टसुखकी प्राप्ति नहीं होती होवै । उलटी दोषकीही प्राप्ति होती होवै । तौ इन भीष्मादिक महान् पुरुषोंकी ता कुलके क्षय करणेविषे तथा स्वजनोंकी हिंसा करणेविषे किसवातै प्रवृत्ति होती है । ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है ।

(मू. श्लो.) यद्यप्येते न पश्यंति लोभोपहतचेतसः । कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकं ॥ ३८ ॥ (पदच्छेदः) यद्यपि । एते । न । पश्यंति । लोभोपहतचेतसः । कुलक्षयकृतं । दोषं । मित्रद्रोहे । च । पातकं ॥ ३८ ॥ (पदार्थः) हे भगवन् लोभग्रस्तचित्तवाले यह भीष्मादिक यद्यपि कुलके नाशकृत दोषकूं तथा मित्रोंके द्रोहविषे पातककूं नहीं देखते तथापि हम ताकूं देखते हैं ॥ ३८ ॥

टीका । हे भगवन् प्राप्त हुए पदार्थके त्यागकूं नहीं सहारणेका नाम लोभ है । ता लोभकरिकै इन भीष्मादिकोंका चित्त ग्रस्त होइ रह्या है । या कारणतैं यह भीष्मादिक कुलके नाश करणेकरिकै प्राप्त होणेहारे दोषकूं तथा अपणे मित्रोंके साथि द्रोह करणेकरिकै प्राप्त होणेहारे पातककूं यद्यपि विचार करिकै देखते नहीं । तथापि हम ता दोषकूं तथा पातककूं भली प्रकार जाणते हैं । यातैं इन भीष्मादिकोंकी तौं यद्यपि युद्धविषे प्रवृत्ति संभवै है । तथापि ता युद्धविषे हमारी प्रवृत्ति संभवती नहीं । इतनै कहणेकरिकै अर्जुननैं या शंकाकी निवृत्ति करी । सा शंका यह है । हे अर्जुन यह भीष्मादिक जो शिष्ट पुरुष हैं । तिनोंकी अपणे बांधवोंके हननविषे प्रवृत्ति देखणेमैं आवै है । और जो जो शिष्ट पुरुषोंका आचार होवै है । सो सो वेदमूलकही होवै है । जैसे श्राद्धादिक कर्मोंविषे प्रवृत्तिरूप शिष्ट पुरुषोंका आचार वेदमूलक होवै है । और ता शिष्ट पुरुषोंके आचारके अनुसारही दूसरे पुरुषोंकी प्रवृत्ति होवै है । यातैं भीष्मादिक शिष्ट पुरुषोंकी अपणे बांधवोंके हननविषे प्रवृत्तिकूं देखिकरिकै तुमारेकूंभी तिसीविषे प्रवृत्त होणा चाहीये । या भगवान्के शंकाकी अर्जुननैं (लोभोपहतचेतसः) या विशेषणके कहणेकरिकै निवृत्ति करी । काहेतैं जिस शिष्ट पुरुषोंके आचारविषे लोभादिक दोष कारण नहीं होवैं । किंतु केवल धर्मबुद्धिही कारण होवै । तिसी आचारविषे वेदमूलकता कल्पना करी जावै है । और सोइही शिष्ट पुरुषोंका आचार इतर जीवोंकूं अंगीकार करणे योग्य होवै है । और जिस शिष्ट पुरुषके आचारविषे केवल लोभादिक दोषही कारण होवै । ता शिष्ट पुरुषके आचारविषे वेदमूलकता कल्पना करी जावै नहीं । और सो लोभादिपूर्वक शिष्ट पुरुषोंका आचार इतर पुरुषोंकूं अंगीकार करणे योग्यभी नहीं है । और इन भीष्मादिकोंका जो बांधवोंके हनन करणेविषे प्रवृत्तिरूप आचार है । ताके विषेभी केवल लोभादिक दोषही कारण हैं । यातैं सो इन भीष्मादिकोंका आचार वेदमूलक नहीं है । ऐसे इन भीष्मादिकोंके लोभमूलक आचारकूं ग्रहण करिकै हम बांधवोंके हनन करणेविषे कैसे प्रवृत्त

होवैंगे। किंतु हम ताकेविषे कदाचित्‌भी नहीं प्रवृत्त होवैंगे इति ॥ ३८ ॥ ❀ ॥ शंका। हे अर्जुन यद्यपि यह भीष्मादिक लोभतैं युद्धविषे प्रवृत्त हुए हैं। तथापि धर्मशास्त्रविषे यह कह्या है। " आहूतो न निवर्तेत द्यूतादपि रणादपि " इति। " विजितं क्षत्रियस्य इति "। अर्थ यह। क्षत्रिय राजाकूं जो कोई पुरुष जूवा खेलणेवासतै तथा युद्ध करणेवासतै आइकै बुलावै। तौ सो क्षत्रिय ता जूवातैं तथा युद्धतैं निवृत्त नहीं होवै। किंतु ता पुरुषके साथि जूवा तथा युद्ध अवश्यकरिकै करै। और युद्ध करिकै एकठा करा हुआ जो धन है। सो धनही क्षत्रियका धर्म्य धन है इति। इत्यादिक धर्मशास्त्रके वचनोंकरिकै क्षत्रिय राजाका युद्धधर्म सिद्ध होवै है। तथा युद्ध करिकै एकठा करा हुआ धनही धर्म्य धन सिद्ध होवै है। और तुमारेकूं इन भीष्मादिकोंनैं युद्ध करणेवासतै बुलाया है। यातैं तुमारेकूं इस युद्धविषे अवश्य प्रवृत्त होणा चाहीये। ऐसी भगवान्‌की शंकाके हुए अर्जुन कहे है।

(मू. श्लो.) कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्त्तितुं॥ कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन॥ ३९ ॥ (पदच्छेदः) कथं। न। ज्ञेयं। अस्माभिः। पापात्। अस्मात्। निर्वर्त्तितुं। कुलक्षयकृतं। दोषं। प्रपश्यद्भिः। जनार्दन ॥ ३९ ॥ (पदार्थः) हे जनार्दन कुलके नाशकृत दोषकूं जानणेहारे हमोनैं पापके हेतुरूप इसँ युद्धतैं निर्वृत्त होणेवासतै कैसे नहीं विचार करणा योग्य है किंतु अवश्य विचार करणा योग्य है ॥ ३९ ॥

टीका। हे जनार्दन अपणे कुलके नाश करणेतैं उत्पन्न होणेहारा जो दोष है। ता दोषकूं भली प्रकारतैं जानणेहारे जो हम हैं तिन हमोनैं पापकी प्राप्ति करणेहारे इस युद्धतैं निवृत्त होणेवासतै क्या नहीं विचार करणा योग्य है। किंतु ता युद्धतैं निवृत्त होणेवासतै हमारेकूं अवश्य विचार करणा योग्य है। और " किमकार्यं दुरात्मनां "। अर्थ यह। दुरात्मा पुरुषोंकूं कौन कार्य करणे योग्य नहीं है। किंतु दुरात्मा पुरुषोंकूं सर्व करणेयोग्य है। या न्यायकूं अंगीकार करिकै यह दुर्योधनादिक जैसे राज्यके लोभकरिकै अपणे कुलका नाश करे हैं। तथा अपणे मित्रोंके साथि द्रोह करे हैं। तैसे हमारेकूं करणा योग्य नहीं है। और "आहूतो न निवर्त्तेत" यह जो धर्मशास्त्रका वचन आपनैं पूर्व कह्या था। सो वचन केवल लोभमूलक है। यातैं सो वचन " स एव पापिष्ठतमो यः कुर्यात्कुलनाशनं " या वचनकरिकै बाधित है। यातैं ता लोभमूलक वचनकूं अंगीकार करिकै हमारी युद्धविषे प्रवृत्ति संभवै नहीं। इहां यह तात्पर्य है। जिस पुरुषकूं जिस कार्यविषे यह कार्य हमारे श्रेयका साधन है या प्रकारका ज्ञान होवै है। सो पुरुषही तिस कार्यविषे प्रवृत्त

होवै है । यातैं यह जान्या जावै है । श्रेयसाधनताज्ञानही पुरुषोंका प्रवर्त्तक है । और जिसके साथि कदाचित्‌भी अश्रेयका संबंध नहीं होवै ताका नाम श्रेय है । जो ऐसा नहीं अंगीकार करीये तौ । शत्रुके मारणे वासतै करा जो श्येनयज्ञ है ता श्येनयज्ञकूंभी धर्मरूपता होणी चाहिये । काहेतैं शत्रुके मरणरूप श्रेयकी साधनता ता श्येनयज्ञविषेभी है । परंतु सो शत्रुका मरणरूप श्रेय अश्रेयका असंबंधी नहीं है। किंतु श्येनयज्ञकरिकै शत्रुकूं मारणेहारे पुरुषकूं नरकरूप अश्रेयकी प्राप्ति होवै है । यातैं सो शत्रुका मरणरूप श्रेय नरकरूप अश्रेयके संबंधवालाही है । यातैं ता श्येनयज्ञविषे धर्मरूपता संभवै नहीं । यह वार्त्ता अन्य शास्त्रविषेभी कही है । तहां श्लोक । "फलतोपि च यत्कर्म नानर्थेनानुबध्यते । केवलप्रीतिहेतुत्वात् तद्धर्म इति कथ्यते" । अर्थ यह । जो कर्म अपणे फलकी प्राप्तितैंभी अनर्थके साथि संबंधवाला नहीं होवै किंतु केवल सुखकाही हेतु होवै ता कर्मकूं धर्म या नामकरिकै कथन करे हैं इति । यातैं जैसे श्येनयज्ञ यद्यपि "श्येनेनाभिचरन् यजेत" इत्यादिक शास्त्रकरिकै विधान करा है । तथापि ता श्येनका शत्रुका मरणरूप फल नरकरूप अश्रेयके संबंधवाला है । यातैं श्रेष्ठ पुरुषोंकी ता श्येनयज्ञविषे प्रवृत्ति होवै नहीं । तैसे यह युद्धभी "आहूतो न निवर्त्तेत" इत्यादिक शास्त्रके वचनोंकरिकै यद्यपि विधान करा है । तथापि ता युद्धके विजयराज्यादिक फल "स एव पापिष्ठतमो यः कुर्यात्कुलनाशनं" इत्यादिक वचनोंकरिकै कथन करा जो कुलके नाशतैं पाप है ता पापरूप अश्रेयके संबंधवालेही हैं । यातैं ते विजयराज्यादिक फल श्रेयरूप नहीं हैं । ऐसे विजयराज्यादिकोंकी प्राप्तिवासतै हमारेकूं इस युद्धविषे प्रवृत्त होणा योग्य नहीं है इति ॥ ३९ ॥ ❀ ॥ तहां युद्धके फलरूप जो विजयराज्यादिक हैं । ते अश्रेयरूप होणेतैं हमारी इच्छाके विषय नहीं हैं । यातैं तिन विजयराज्यादिकोंकी प्राप्तिवासतै हमारेकूं इस युद्धविषे प्रवृत्त होणा योग्य नहीं है । यह अर्थ पूर्व श्लोकविषे कथन करा । अब तिसी अर्थकूं पुनः दृढ करणेवासतै सो अर्जुन तिन विजयराज्यादिकोंविषे अनर्थका संबंधीपणा कथन करिकै अश्रेयरूपता वर्णन करे है पंच श्लोकोंकरिकै ।

(मू. श्लो.) कुलक्षये प्रणश्यंति कुलधर्माः सनातनाः । धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोभिभवत्युत ॥ ४० ॥ (पदच्छेदः) कुलक्षये । प्रणश्यंति । कुलधर्माः । सनातनाः । धर्मे । नष्टे । कुलं । कृत्स्नं । अधर्मः । अभिभवति । उत ॥ ४० ॥ (पदार्थः) हे भगवन् कुलके नाश हुए परंपरासैं प्राप्त कुलके सर्व धर्म नाशकूं प्राप्त होवैं हैं । और धर्मके नाश हुए बाकी रहे सर्वही कुलकूं अधर्म अपणे वश करि लेवै है ॥ ४० ॥

टीका । अपणे वंशपरंपराकरिकै प्राप्त तथा अपणे कुलके अनुसार तथा जातिके अनुसार करणेयोग्य ऐसे जो अग्निहोत्रादिक धर्म हैं । तिन धर्मोंकी प्रवृत्ति करणेहारे जो वृद्ध पुरुष हैं । तिन वृद्ध पुरुषोंका जबी नाश होवै है । तबी तिन कर्त्ता पुरुषोंके अभाव होणेतैं ते अग्निहोत्रादिक सर्व कुलके धर्म नाशकूं प्राप्त होवै हैं । और तिन वृद्ध पुरुषोंके नाशकरिकै तिन सर्व धर्मोंके नाश हुएतैं अनंतर शिक्षा करणेहारे वृद्ध पुरुषोंके अभावतैं बाकी रहे हुए स्त्रीबालकादिरूप कुलकूं अनाचाररूप अधर्म अपणे वश करि लेवै है इति ॥ ४० ॥ किंच ।

(मू. श्लो.) अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यंति कुलस्त्रियः । स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥ (पदच्छेदः) अधर्माभिभवात् । कृष्ण । प्रदुष्यंति । कुलस्त्रियः । स्त्रीषु । दुष्टासु । वार्ष्णेय । जायते । वर्णसंकरः ॥ ४१ ॥ (पदार्थः) हे कृष्ण ता अधर्मके वशपणेतैं कुलीन सर्व स्त्रीयां व्यभिचारिणी होवै हैं हे वार्ष्णेय तिन व्यभिचारिणी स्त्रीयोंविषे वर्णसंकरपुत्र उत्पन्न होवै हैं ॥ ४१ ॥

टीका । हे कृष्ण ता अधर्मकी वृद्धितैं अनंतर । हमारे पतियोंनैं धर्मका उल्लंघन करिकै जो कुलका नाश करा है । तौ हमारेकूं पतिव्रताधर्मका उल्लंघन करिकै व्यभिचार करणेविषे कौन दोष होवैगा । या प्रकारकी कुतर्ककरिकै युक्त हुईयां ते कुलकी स्त्रीयां व्यभिचारकर्मविषे प्रवृत्त होवै हैं । अथवा धर्मशास्त्रविषे पतिके धर्म अधर्मका फल स्त्रीकूंभी कथन करा है । यातैं कुलके नाश करणेकरिकै पापकूं प्राप्त हुए जो पति हैं । तिन पतित पतियोंके संबंधतैं तिन स्त्रीयोंकी व्यभिचारकर्मविषे प्रवृत्ति होवै है । तिन व्यभिचारिणी स्त्रीयोंविषे ऊंच जातिवाले पुरुषोंके संबंधतैं अथवा नीच जातिवाले पुरुषोंके संबंधतैं वर्णसंकरपुत्र उत्पन्न होवै हैं इति ॥ ४१ ॥ ॥ किंच ।

(मू. श्लो.) संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च । पतंति पितरो ह्येषां लुप्तपिंडोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥ (पदच्छेदः) संकरः । नरकाय । एव । कुलघ्नानां । कुलस्य । च । पतंति । पितरः । हि । एषां । लुप्तपिंडोदकक्रियाः ॥ ४२ ॥ (पदार्थः) किंच कुलका संकर कुलके नाश करणेहारे पुरुषोंके नरकवासतैंही होवै है तथा इन कुलके नाश करणेहारे पुरुषोंके पितरभी पिंडजलक्रियातैं रहित हुए नरकविषे पडे हैं ॥ ४२ ॥

टीका । हे भगवन् कुलविषे उत्पन्न भया जो वर्णसंकर है । सो वर्णसंकर कुलके नाश करणेहारे पुरुषोंकूं नरककी प्राप्तिवासतैंही होवैहै । किंवा । सो व-

र्णसंकर केवल कुलके नाश करणेहारे पुरुषोंके नरकवासतै नहीं होवै है । किंतु ता वर्णसंकरकरिकै तिनोंके पितरोंकूंभी नरककी प्राप्ति होवै है । या अर्थकूं कहे हैं । (पतंतीति) अपणे पितरोंवासतै पिंडक्रियाके करणेहारे तथा जलक्रियाके करणेहारे जो पुत्र हैं । ते पुत्र पीछे रहे नहीं । यातैं निवृत्त होइ गई है पिंडक्रिया तथा जलक्रिया जिनोंकी ऐसे जो कुलके नाश करणेहारे पुरुषोंके पितर हैं । ते पितर नरककी प्राप्तिवासतै स्वर्गतैं नीचै पडै हैं । इहां यद्यपि इतिहासपुराणादिकोंविषे यह वार्त्ता कथन करी है । एक कालविषे परशुराम सर्व क्षत्रियोंकूं हनन करता भया । तिसतैं अनंतर तिन क्षत्रियोंकी स्त्रीयां ब्राह्मणोंतैं पुत्रोंकूं उत्पन्न करतीयां भईयां । जो कदाचित् अन्य पुरुषतैं उत्पन्न हुए पुत्रकी दीई हुई पिंडक्रिया तथा जलक्रिया पिताकूं नहीं प्राप्त होती होवै । तौ ते क्षत्रिय राजावोंकी स्त्रीयां ब्राह्मणोंतैं पुत्रोंकूं किसवासतै उत्पन्न करतीयां भईयां हैं। यातैं यह जान्या जावै है । जैसे स्त्रीरूप क्षेत्रविषे वीर्यरूप बीजकी प्राप्ति करणेहारे बीजपति पुरुषकूं ता पुत्रके दीये हुए पिंडादिक प्राप्त होवै हैं। तैसे ता स्त्रीरूप क्षेत्रके पति पुरुषकूंभी ता पुत्रक दीये हुए पिंडादिक प्राप्त होवै हैं । तथापि श्रुतिविषे बीजपति पुरुषकूंही ता पुत्रके दीये हुए पिंडादिकोंकी प्राप्ति कथन करी है । क्षेत्रपति पुरुषकूं ता पुत्रके दीये हुए पिंडादिकोंकी प्राप्ति कथन करी नहीं । तहां श्रुति । "न शेषो अग्ने अन्यजातमस्ति" ॥ अर्थ यह । हे अग्नि अपणी स्त्रीविषे अन्य पुरुषतैं उत्पन्न हुआ जो पुत्र है सो पुत्र होवै नहीं इति । किंवा । यह वार्त्ता यास्कमुनिनैंभी कथन करी है । "अन्योदर्यो मनसापि न मंतव्यो ममायं पुत्रः इति" । अर्थ यह । अपणी स्त्रीविषे अन्य पुरुषतैं उत्पन्न भया जो पुत्र है । ता पुत्रकूं या क्षेत्रपति पितानैं यह हमाराही पुत्र है या प्रकार मनकरिकैभी नहीं जानणा इति । किंवा । श्रुतिविषे अपणे वर्त्तमान पिताका संशयभी कथन करा है । तहां श्रुति । "ये यजामहे इति योहमस्मिससन्यजे इति" । अर्थ यह । जे हम हैं। ते हम यजन करते हैं। हम ब्राह्मण हैं अथवा अब्राह्मण हैं यह वार्त्ता हम जानते नहीं । काहेतें लोकप्रसिद्ध वर्त्तमान जो यह पिता है । सो पिता इसी पितातैं मैं उत्पन्न भया हूं अथवा किसी अन्य पितातैं मैं उत्पन्न भया हूं या प्रकारके संशयकरिकै ग्रस्त है । यातैं यहही हमारा पिता है या प्रकारका निश्चय संभवै नहीं । यातैं जे हम हैं ते हम यजन करते हैं इति । इत्यादिक श्रुतिवचनोंकरिकै बीजपति पिताकूंही पिंडादिकोंकी प्राप्ति सिद्ध होवै है । क्षेत्रपति पिताकूं पिंडादिकोंकी प्राप्ति सिद्ध होवै नहीं । और स्त्रीरूप क्षेत्रविषे अन्य पुरुषतैं पुत्रकी उत्पत्तिकूं कथन करणेहारे जो स्मृति आदिक शास्त्रोंके वचन हैं । तिन वचनोंका इस लोकविषे वंशके स्थापन करणेविषे तात्पर्य है । कोई क्षेत्रपति पुरुषकूं ता पुत्रके दीये हुए पिंडादिकोंकी प्राप्तिविषे तिन वचनोंका तात्पर्य नहीं है । यातैं वर्णसंकरपुत्रोंके उत्पन्न हुए ते कुलना-

श करणेहारे पुरुषोंके पितर पिंडादिक क्रियातैं रहित होइकै अवश्य नरकविषे पडे हैं । यह यद्यपितैं आदि लैके सर्व अर्थ (पतंति पितरोहि एषां) या वचनविषे स्थित हि या शब्दकरिकै अर्जुननैं सूचन करा इति ॥ ४२ ॥ ❀ ॥ किंच ।

(मू. श्लो.) दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः । उत्साद्यंते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः ॥ ४३ ॥ (पदच्छेदः) दोषैः । एतैः । कुलघ्नाना । वर्णसंकरकारकैः । उत्साद्यंते । जातिधर्माः । कुलधर्माः । च । शाश्वताः ॥ ४३ ॥ (पदार्थः) हे भगवन् कुलके हनन करणेहारे पुरुषोंके वर्णसंकरके करणेहारे इन दोषोंनैं परंपरातैं प्राप्त जातिके धर्म तथा कुलके धर्म नाश करीते हैं ॥ ४३ ॥

टीका । हे भगवन् जे पुरुष यह कार्य हमारेकूं करणेयोग्य है तथा यह कार्य हमारेकूं नहीं करणे योग्य है या प्रकारके विचारका परित्याग करिकै कामक्रोधलोभादिकोंके वश हुए कुलधर्मोंके प्रवर्त्तक पुरुषोंका हनन करते हैं । तिन पुरुषोंका नाम कुलघ्न है । तिन कुलघ्न पुरुषोंके वर्णसंकरकी उत्पत्ति करणेहारे जो पूर्व उक्त दोष हैं । तिन दोषोंनैं श्रुतिस्मृतिमूलक तथा परंपरातैं प्राप्त जो क्षत्रियत्वादिक जातिप्रयुक्त धर्म हैं तथा कुलके जो असाधारण धर्म हैं ते सर्व धर्म नाश करीते हैं इति ॥ ४३ ॥ ॥ किंच ॥

(मू. श्लो.) उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन । नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥ (पदच्छेदः) उत्सन्नकुलधर्माणां । मनुष्याणां । जनार्दन । नरके । अनियतं । वासः । भवति । ईति । अनुशुश्रुम ॥ ४४ ॥ (पदार्थः) हे जनार्दन नष्ट करे हैं कुल जाति आदिकोंके धर्म जिनोंनैं ऐसे मनुष्योंका नरकविषे अवधितैं रहित निवास होवै है इस प्रकार हम आचार्योंके मुखतैं श्रवण करते भये हैं ॥ ४४ ॥

टीका । हे जनार्दन जे पुरुष लोभके वश होइकै अपणे कुलका हनन करिकै अपणे कुलके धर्मोंकूं तथा जातिके धर्मोंकूं नष्ट करे हैं । तिन पुरुषोंका युगमन्वंतरादिक अवधितैं रहित रौरवादिक नरकोंविषे निवास होवै है । यह वार्त्ता हम केवल अपणी बुद्धिकी कल्पनातैं नहीं कहते । किंतु पूर्व आचार्योंके मुखतैं तथा महान् ऋषियोंके मुखतैं यह वार्त्ता हम श्रवण करते भये हैं । तहां श्लोक ॥ " प्रायश्चित्तमकुर्वाणाः पापेष्वभिरता नराः ।

अपश्चात्तापिनः पापान् निरयान् यांति दारुणान् " ॥ अर्थ यह । जे पुरुष पापोंविषे प्रीतिवाले हैं । तथा ता पापकी निवृत्तिवासतै प्रायश्चित्तकूं करते नहीं । तथा पश्चात्तापकूंभी नहीं करते । ते पुरुष ता पापके वशतैं दारुण नरकोंकूं प्राप्त होवै हैं इति । इत्यादिक अनेक वचन पापी पुरुषोंकूं नरककी प्राप्ति कथन करे हैं । इहां (नरके नियतं) या वचनविषे ककारके उत्तर अकारका लोप मानिकै अनियतं ऐसा पदच्छेद करा है । ता अनियतपदका पूर्व अर्थ कथन करा । और जो अकारका लोप तहां न अंगीकार करीये । तौ नियतं या प्रकारका पदच्छेद करणा । ता नियतपदका अवश्यकरिकै यह अर्थ करणा । क्या ऐसे मनुष्योंकूं नरकविषे अवश्यकरिकै निवास होवै है इति ॥ ४४ ॥ ❀ ॥ तहां अपणे बांधवोंकी हिंसाविषे है परिअवसान जिसका ऐसा जो युद्ध करणेका निश्चय है । सो निश्चयभी सर्व प्रकारतैं अत्यंत पापिष्ठ है । तौ यह युद्धरूप कर्म अत्यंत पापिष्ठ है याकेविषे क्या कहणा है । या अर्थके कहणेवासतै ता युद्धके निश्चय करणेकरिकै अपणेकूं धिक्कार करता हुआ सो अर्जुन कहे है ।

(मू. श्लो.) अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयं । यद्राज्यसुखलोभेन हंतुं स्वजनमुद्यताः ॥ ४५ ॥ (पदच्छेदः) अहो । बते । महत्पापं । कर्तुं । व्यवसिताः । वयं । यत् । राज्यसुखलोभेन । हंतुं । स्वजनं । उद्यताः ॥ ४५ ॥ (पदार्थः) बडा आश्चर्य है बडा खेद है जो हम महान् पापकूं करणे वासतै निश्चयवाले हुए हैं जो हम राज्यसुखके लोभकरिकै अपणे बांधवोंकूं हनन करणेवासतै उद्यमवाले हुए हैं सोईही महान् पाप है ॥ ४५ ॥

टीका । हे भगवन् यह हमारेकूं बडा आश्चर्य होता है तथा बडा खेद होता है । जो हम विचारवान् होइकेभी इस महान् पापके करणेवासतै प्रयत्नवाले हुए हैं । सो कौन पाप है जिसके करणेवासतै तुम प्रयत्नवाले हुए हो । ऐसी भगवान्की शंकाकरिकै अर्जुन कहे है । (यदिति) राज्यकी प्राप्तिकरिकै प्राप्त होणेहारा जो क्षणभंगुर विषयसुख है । ता विषयसुखविषे जो लंपटतारूप लोभ है । ता लोभकरिकै जो हम अपणे भ्रातापुत्रादिक बांधवोंकूं तीक्ष्ण शस्त्रोंकरिकै हनन करणेवासतै उद्यमवाले हुए हैं । सोईही महान् पाप है इसतैं परे दूसरा कोई पाप है नहीं । तात्पर्य यह । जो तुमारी ऐसी बुद्धि है तौ युद्धका अभिनिवेश करिकै तूं इहां किसवासतै आया है या प्रकारका वचन आपनैं कहणा नहीं । काहेतैं विचारतैं विनाही कार्यकूं करणेहारा जो मैं हूं । तिस हमनैं यह बहुत उद्धतपणा करा है इति ॥ ४५ ॥ ❀ ॥ शंका ॥ हे अर्जुन तुमारेकूं यद्यपि युद्धादिकोंतैं वैराग्य हुआ है

तथापि भीमसेनादिकोंकूं ता युद्ध करणेकी बहुत उत्कट इच्छा है। यातैं बांधवोंका नाश तौ अवश्यकरिकै होवैगा। पुनः तुमारेकूं क्या कार्य करणे योग्य है। ऐसी भगवान्‌की शंकाकरिकै अर्जुन कहे है।

(मू॰ श्लो॰) यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः। धार्तराष्ट्रा रणेहन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥ ४६ ॥ (पदच्छेदः) यदि। मां अप्रतीकारं। अशस्त्रं। शस्त्रपाणयः। धार्तराष्ट्राः। रणे। हन्युः। तत्। मे। क्षेमतरं। भवेत् ॥ ४६ ॥ (पदार्थः) जबी प्रतीकारतैं रहित तथा शस्त्रोंतैं रहित हमारेकूं यह शस्त्रोंवाले धृतराष्ट्रके पुत्रादिक इस युद्धभूमिविषे हनन करैंगे सो हनन हमारा अत्यंत क्षेमरूप होवैगा ॥ ४६ ॥

टीका। हे भगवन् अपणे प्राणोंकी रक्षावासतै करे हुएकी जो प्रतिक्रिया है ताका नाम प्रतीकार है। जैसे अपणे प्राणोंकी रक्षा करणेवासतै। ताडन करणेहारे पुरुषकूं जो ताडन करणा है ताका नाम प्रतीकार है। ता प्रतीकारतैं रहितका नाम अप्रतीकार है। अथवा। इन बांधवोंकूं मैं हनन करौंगा या प्रकारके निश्चयमात्रकरिकै प्राप्त भया जो पाप है। ता पापकी निवृत्ति करणेहारा जो शरीरके नाशतैं विना अन्य प्रायश्चित्त है ता प्रायश्चित्तका नाम प्रतीकार है। ता प्रतीकारतैं जो रहित होवै ताका नाम अप्रतीकार है। ऐसा अप्रतीकार जो मैं हूं। या कारणतैंही मैं शस्त्रोंतैं रहित हूं। ऐसे प्रतीकारतैं रहित तथा शस्त्रोंतैं रहित मेरेकूं जो कदाचित् शस्त्र हैं हाथविषे जिनोंके ऐसे यह धृतराष्ट्रके दुर्योधनादिक पुत्र इस युद्धभूमिविषे हनन करैंगे। तौ सो हमारा हनन हमारा अत्यंत हितरूप होवैगा। काहेतैं “अहिंसा परमो धर्मः” इत्यादिक वचनोंकरिकै कथन करा जो सर्व भूतप्राणीयोंकी अहिंसारूप धर्म है। सो अहिंसारूप धर्म अपणे प्राणोंतैंभी उत्कृष्ट है। काहेतैं इन प्राणोंके धारणतैं अनेक प्रकारके पापकी उत्पत्ति होवै है। और ता अहिंसाधर्मतैं कोई पाप उत्पन्न होवै नहीं। उलटा महान् पुण्य उत्पन्न होवै है। यातैं इस जीवनकी अपेक्षाकरिकै सो हमारा मरणही अत्यंत हितरूप है। और अपणे बांधवोंके मारणेके संकल्पकरिकै उत्पन्न भया जो पाप है। ता पापकी निवृत्ति करणेहारा दूसरा कोई प्रायश्चित्त है नहीं। किंतु यह हमारा मरणही ता पापके निवृत्तिका प्रायश्चित्त है। या कारणतैंभी यह हमारा मरणही हमारा अत्यंत हितरूप है। इहां किसी पुस्तकविषे (तन्मे प्रियतरं भवेत्) या प्रकारका पाठभी होवै है। ता पाठकाभी यह पूर्व उक्त अर्थही जानि लेना। अथवा। (तन्मे क्षेमतरं भवेत्) या वचनका इस प्र-

कारका अर्थ करणा। सो मरण हमारेकूं क्षेमकी प्राप्तिवासतैही होवैगा। काहेतैं शास्त्रविषे क्षेमका यह स्वरूप कथन करा है। "अप्राप्तप्रापणं योगः क्षेमस्तु स्थितरक्षणं"। अर्थ यह। अप्राप्त वस्तुकी जो प्राप्ति है ताका नाम योग है। और पूर्वस्थित वस्तुका जो रक्षण है ताका नाम क्षेम है इति। और क्षेमतैंभी जो अधिक क्षेम होवै ताका नाम क्षेमतर है। सो इहां प्रसंगविषे यह क्षेमतर है। अपणे कुलके नाश करणेतैं उत्पन्न होणेहारा जो दोष है। तथा ता दोषकरिकै प्राप्त होणेहारी जो नरककी प्राप्ति है। तथा इस लोकविषे प्राप्त होणेहारी जो अपकीर्ति है। इत्यादिक सर्व अनर्थोंकी निवृत्तिपूर्वक जो पूर्व कृत पुण्यकर्मोंके नाशका अभाव है सोईही क्षेमतर है। सो क्षेमतर हमारेकूं इस मरणतैंही प्राप्त होवैगा। यातैं इन बांधवोंके साथि युद्ध करणेतैं हमारा मरणही श्रेष्ठ है इति ॥ ४६ ॥ ॥ ❀ ॥ तिसतैं अनंतर क्या वृत्तांत होता भया ऐसी धृतराष्ट्रकी शंकाकरिकै संजय कहे है।

(मू. श्लो.) संजय उवाच। एवमुक्त्वाऽर्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्। विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः॥ ४७ ॥
इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे अर्जुनविषादो नाम प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥
(पदच्छेदः) एवं। उक्त्वा। अर्जुनः। संख्ये। रथोपस्थे। उपाविशत्। विसृज्य। सशरं। चापं। शोकसंविग्नमानसः ॥४७॥
(पदार्थः) हे धृतराष्ट्र शोककरिकै पीडित है मन जिसका ऐसा अर्जुन संग्रामविषे इस प्रकारका वचन कहिकरिकै शरसहित धनुषकूं परित्याग करिकै रथके ऊपरि बैठता भया ॥ ४७ ॥

टीका। हे धृतराष्ट्र अपणे बांधवोंके विनाशरूप निमित्ततैं उत्पन्न भया जो शोक है। ता शोककरिकै पीडित है मन जिसका ऐसा सो अर्जुन ता संग्रामविषे कृष्णभगवान्‌केप्रति ता पूर्व उक्त वचनकूं कहिकरिकै तथा शरसहित धनुषका परित्याग करिकै ता रथके ऊपरि स्थित होता भया इति ॥ ४७ ॥ इति श्रीपरमहंसपरिव्राजकाचार्यश्रीमत्स्वामिउद्धवानंदगिरिपूज्यपादशिष्येण स्वामिचिद्घनानंदगिरिणा विरचितायां प्राकृतटीकायां गीतागूढार्थदीपिकाख्यायां प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥ श्रीगुरुभ्यो नमः ॥ श्रीशंकराचार्येभ्यो नमः ॥ श्रीकाशीविश्वेश्वराभ्यां नमः ॥ ॥ ॥

इति श्रीस्वामीचिद्घनानंदगिरिकृतभाषाभगवद्गीताटीकायां
प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥